जिनभाषित

वीर निर्वाण सं. 2529

कुण्डलपुर-बड़े बाबा के निर्माणाधीन
नवीन मन्दिर की आकृति

श्रावण, वि.सं. 2060

अगस्त 2003

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संवेग

आचार्य श्री विद्यासागर जी

जिस प्रकार ललाट पर तिलक के अभाव में स्त्री का सम्पूर्ण शृंगार अर्थहीन है, मूर्ति के नहीं होने पर जैसे मंदिर की कोई शोभा नहीं है, वैसे ही बिना संवेग के सम्यग्दर्शन कार्यकारी नहीं है। संवेग सम्यग्दृष्टि साधक का अलंकार है।

संवेग का मतलब है संसार से भयभीत होना, डरना। आत्मा के अनन्त गुणों में यह संवेग भी एक गुण है। पूज्यपाद स्वामी लिखते हैं कि सम्यग्दर्शन दो प्रकार का है- सराग सम्यग्दर्शन और वीतराग सम्यग्दर्शन। संवेग, सराग सम्यग्दर्शन के चार लक्षणों में से एक है। जैसे ललाट पर तिलक के अभाव में स्त्री का शृंगार अर्थहीन है, मूर्ति के न होने पर मंदिर की कोई शोभा नहीं है। वैसे ही बिना संवेग के सम्यग्दर्शन कार्यकारी नहीं है। संवेग सम्यग्दृष्टि साधक का अलंकार है।

संवेग एक उदासीन दशा है जिसमें रोना भी नहीं है, हँसना भी नहीं है, पलायन भी नहीं है, बैठना भी नहीं है, दूर भी नहीं हटना है और आलिंगन भी नहीं करना है। यह जो आत्मा की अनन्य स्थिति है वह सद्गृहस्थ से लेकर मोक्ष-मार्ग पर आरूढ़ मुनि महाराज तक में प्रादुर्भूत होती है। मुनि पग-पग पर डरता है और सावधान रहकर जीवन जीता है। वह अपने आहार-विहार में, उठने, बैठने और लेटने की सभी क्रियाओं में सदैव जाग्रत रहता है, सजग रहता है। यदि ऐसा न हो तो वह साधु न होकर स्वादु बन जायेगा। साधु का रास्ता तो मनन और चिंतन का रास्ता है। उसकी यात्रा अपरिचित वस्तु (आत्मा) से परिचय प्राप्त करने का उत्कृष्ट प्रयास है। ऐसे संवेग-समन्वित साधु के दर्शन दुर्लभ हैं। आप कहते हैं कि हम 'वीर' की सन्तान हैं। बात सही है। आप 'वीर' की सन्तान तो अवश्य हैं, किन्तु उनके अनुयायी नहीं। सही अर्थों में आप 'वीर' की सन्तान तभी कहे जायेंगे जब उनके बताये मार्ग का अनुसरण करेंगे।

संवेग का प्रारम्भ कहाँ ? जब दृष्टि नासाग्र हो, केवल अपने लक्ष्य की ओर हो और अविराम गति से मार्ग पर चले। आपने सर्कस देखा होगा, सर्कस में तार पर चलने वाला न ताली बजाने वालों की ओर देखता है और न ही लाठी लेकर खड़े आदमी को देखता है। उसका उद्देश्य इधर-उधर देखना नहीं है उसका उद्देश्य तो एकमात्र संतुलन बनाये रखना और अपने लक्ष्य पर पहुँचना होता है। यही बात संवेग की है।

सम्यग्दर्शन के बिना पाप से डरना नहीं होता। संसार से 'भीति' सम्यग्दर्शन का अनन्य अंग है। वीतराग सम्यग्दर्शन में ये 'संवेग' अधिक घनीभूत होता है। संवेग अनुभव और श्रद्धा के साथ जुड़ा हुआ है। इस संवेग की प्राप्ति अति दुर्लभ है। वीतरागता से पूर्व यह प्रस्फुटित होता है और फिर वीतरागता उसका कार्य बन जाती है। संवेग के प्रादुर्भूत होने पर सभी बाहरी आकांक्षायें छूट जाती हैं जहाँ संवेग होता है वहाँ विषयों की ओर रुचि नहीं रह जाती, उदासीनता आ जाती है।

भरत चक्रवर्ती का वर्णन सही रूप में प्रस्तुत नहीं किया जा रहा है। उनके भोगों का वर्णन तो किया जाता है किन्तु उनकी उदासीनता की बात कोई नहीं करता। एक व्यक्ति अपने बारह बच्चों के बीच रहकर बड़ा दुःखी होता है। उसकी पत्नी उससे कहती है, "भरत जी इतने बड़े परिवार के बीच कैसे रहते होंगे। जहाँ छयानवै हजार रानियाँ, अनेकों बच्चे और अपार सम्पदा थी। उनके परिणामों में तो कभी क्लेश हुआ हो ऐसा सुना ही नहीं गया।" वह व्यक्ति भरत जी की परीक्षा लेने पहुँच जाता है, भरत जी सारी बात सुनकर उसे अपने रनिवास में भेज देते हैं। उस व्यक्ति के हाथ पर तेल से भरा हुआ कटोरा रख दिया जाता है और कह दिया जाता है कि "सब कुछ देख आओ, लेकिन इस कटोरे में से एक बूँद भी नीचे नहीं गिरनी चाहिये अन्यथा मृत्यु दण्ड दिया जायेगा।" वह व्यक्ति सब कुछ देख आया पर उसका देखना न देखने के बराबर ही रहा, सारे समय बूँद न गिर जाने का भय बना रहा। तब भरतजी ने उसे समझाया, 'मित्र जागृति लाओ, सोचो, समझो। ये नव निधियाँ, चौदह रत्न, ये छयानवें हजार रानियाँ ये सब मेरी नहीं हैं। मेरी निधि तो मेरे अंतरंग में छिपी हुई हैं, ऐसा विचार करके ही मैं इन सबके बीच शांत भाव से रहता हूँ।'

रत्नत्रय ही हमारी अमूल्य निधि है। इसे ही बचाना है। इसको लूटने के लिये कर्म चोर सर्वत्र घूम रहे हैं। जाग जाओ, सो जाओगे तो तुम्हारी निधि ही लुट जायेगी।

"कर्म चोर चहुँ ओर सरबस लूटें सुध नहीं"

संवेगधारी व्यक्ति अलौकिक आनन्द की अनुभूति करता है। चाहे वह कहीं भी रहे। किन्तु संवेग से रहित व्यक्ति स्वर्गिक सुखों के बीच भी दुःख का अनुभव करता है और दुखी ही रहता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रजि. नं. UP/HIN/29933/24/1/2001-TC
डाक पंजीयन क्र.-म.प्र./भोपाल/588/2003

जिनभाषित

मासिक

अगस्त 2003
वर्ष 2, अङ्क 7

सम्पादक
प्रो. रतनचन्द्र जैन

कार्यालय
ए/2, मानसरोवर, शाहपुरा
भोपाल- 462 039 (म.प्र.)
फोन नं. 0755-2424666

सहयोगी सम्पादक
पं. मूलचन्द्र लुहाड़िया, मदनगंज किशनगढ़
पं. रतनलाल बैनाड़ा, आगरा
डॉ. शीतलचन्द्र जैन, जयपुर
डॉ. श्रेयांस कुमार जैन, बड़ौत
प्रो. वृषभ प्रसाद जैन, लखनऊ
डॉ. सुरेन्द्र जैन 'भारती', बुरहानपुर

शिरोमणि संरक्षक
श्री रतनलाल कँवरीलाल पाटनी
(मे. आर.के.मार्बल्स लि.)
किशनगढ़ (राज.)
श्री गणेश कुमार राणा, जयपुर

प्रकाशक
सर्वोदय जैन विद्यापीठ
1/205, प्रोफेसर्स कॉलोनी,
आगरा-282002 (उ.प्र.)
फोन : 0562-2151428, 2152278

सदस्यता शुल्क

शिरोमणि संरक्षक	5,00,000 रु.
परम संरक्षक	51,000 रु.
संरक्षक	5,000 रु.
आजीवन	500 रु.
वार्षिक	100 रु.
एक प्रति	10 रु.

सदस्यता शुल्क प्रकाशक को भेजें।

अन्तस्तत्त्व

पृष्ठ

- **प्रवचन : संवेग** — आ. श्री विद्यासागरजी — आवरण पृष्ठ 2
- **आपके पत्र: धन्यवाद** — 2
- **सम्पादकीय :** खेद जनक लेख — 3
- **लेख**
  - सिद्धांत समन्वयसार : ब्र. शांतिकुमार जी — 15
  - वर्तमान में अहिंसा की उपयोगिता : डॉ. श्रेयांसकुमार जैन — 5
  - चतुर्विध आराधना पर्व चातुर्मास : ब्र. संदीप 'सरल' — 6
  - जैन ग्रहस्थाचार परंपरा का.... : डॉ. शीतलचन्द्र जैन — 7
  - काव्य, दर्शन और अध्यात्म की अन्यतम उपलब्धि : मूकमाटी : डॉ. के.एल. जैन — 10
  - ज़रा सोचिये ! : पद्मचन्द शास्त्री — 14
  - सिद्धतीर्थ कुण्डलपुर : कैलाश मड़बैया — 16
  - चतुर्विध संघ शांति ...... : जैन सुधीर कासलीवाल — 18
  - वाग्वर क्षेत्र का सुन्दर सृजन... : नरेन्द्र जैन — 21
  - सांगानेर का सच : निर्मल कासलीवाल — 25
- **जिज्ञासा-समाधान** : पं. रतनलाल बैनाड़ा — 22
- **बोधकथा**
  - सौदा न पटा : लघुलोक कथाएँ — 13
  - कपट का फल : दो हजार वर्ष पुरानी कहानी — 20
- **समाचार** — 29 - 31
- **वर्षायोग : चातुर्मास 2003** — 32 - 36
- **जापान में प्रचलित येनमत और जैनधर्म** — आवरण पृष्ठ 3

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आपके पत्र, धन्यवाद : सुझाव शिरोधार्य

''जिनभाषित'' प्राय: मिल जाता है, जून 2003 का अङ्क भी मिला। आपका सम्पादकीय - 'द्रव्य और तत्त्व में भेदाभेद' पढ़ा। द्रव्य और तत्त्व के आगम परक सूक्ष्म विवेचन हेतु अनेकश: धन्यवाद।

सम्पादकीय का 3/4 अंश पढ़ने के पश्चात् सम्पादकीय लेखन का स्रोत ज्ञात हुआ।

'उपयोगो लक्षणम्' जीव का यह लक्षण पूज्य आचार्य उमास्वामी ने अपने तत्त्वार्थ सूत्र में लिखा है। उपयोग दो प्रकार का है- ज्ञानोपयोग और दर्शनोपयोग। यह जीव का सामान्य लक्षण है, परन्तु है जीव का ही लक्षण। फिर चाहे वह अपना ज्ञानदर्शन हो अथवा दूसरे का। जिसमें भी ज्ञानदर्शन होगा, वह नियम से जीव होगा, अजीव नहीं।

जीव, अजीव, आश्रव, बन्ध, संवर, निर्जरा और मोक्ष- इन सात तत्त्वों का विवेचन आचार्यों ने जीव के अध्यात्मिक विकास की दृष्टि से किया है तथा जहाँ जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल इन छह द्रव्यों का विवेचन किया है, वहाँ भौतिक दृष्टि से लोक और अलोक के स्वरूप को बतलाने के लिये किया है। जीव दोनों स्थानों पर परिगणित है। क्योंकि जीव के विकास की ही सारी कहानी अभीष्ट है और वह कहाँ-कहाँ पाया जाता है तथा उसका विरोधी तत्त्व कौन सा है ? इसकी भी जानकारी अपेक्षित है।

जब जीव के अध्यात्मिक विकास की चर्चा की जाती है तब वही जीव जीवतत्त्व के नाम से जाना जाता है और जब भौतिक सत्यापन किया जाता है तो वही जीव जीवद्रव्य के नाम से सम्बोधित होता है, किन्तु दोनों ही परिस्थितियों में जीव को अपने और पराये ज्ञान दर्शन के आधार पर ''जिसमें मेरा ज्ञानदर्शन हो वही जीवतत्त्व है। जिसमें मेरा ज्ञानदर्शन नहीं है, वे अजीव तत्त्व हैं।'' ऐसा विभाजन करना जैन सिद्धान्त के सर्वथा विपरीत है।

परम पद में जो स्थित हो, उसे परमेष्ठी कहते हैं। परमेष्ठी पाँच हैं- अरिहन्त परमेष्ठी, सिद्ध परमेष्ठी, आचार्य परमेष्ठी, उपाध्याय परमेष्ठी और साधु परमेष्ठी। यह संज्ञा गुणों के आधार पर अवश्य है, किन्तु पञ्च परमेष्ठियों में इन्हीं पाँच को नामाङ्कित किया गया है।

सम्प्रति तीर्थंकर परमेष्ठी, गणधर परमेष्ठी आदि शब्दों का भी प्रचलन हो गया है। परम पद में स्थित होने के कारण ये भी परमेष्ठी हैं, इसमें कहीं भी और किसी भी प्रकार का सन्देह नहीं है। फिर भी जब उपर्युक्त प्रकार से पञ्चपरमेष्ठी निर्धारित हैं और उनमें तीर्थंकर परमेष्ठी, गणधर परमेष्ठी भी परिगणित हैं, तब फिर इनकी परमेष्ठी के रूप में पृथक पहचान बनाने का औचित्य क्या है ? कृपया सूचित करें।

भवदीय
कमलेश कुमार जैन
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

''जिनभाषित'' माह मई, 2003 का अंक मध्य जून को प्राप्त किया था। सम्पादकीय, पठनीय और मननीय था। श्री युत प्रो. निहालचंद का 'जैनधर्म की वैज्ञानिकता' विज्ञान की कसौटी पर पूरी तरह खरा उतरता है।

अन्य सभी सामग्री अति उत्तम है। पपौरा जी क्षेत्र के दर्शन पत्रिका हाथ में आते ही (परोक्ष से ही सही) हो गए।

ज्ञानमाला जैन, भोपाल

आपकी निष्ठा, श्रम और समर्पण के कारण ''जिनभाषित'' ने जैनधर्म, संस्कृति और साहित्य के क्षेत्र में प्रमाणिक ख्याति अर्जित की है। आशा है यह क्रम उत्तरोत्तर जारी रहेगा।

आपका
प्रो. के.एल. जैन, टीकमगढ़

आपके मनीषाप्रधान हाथों से शिल्पित एवं गरिमाप्रधान मनीषा से सिंचित ''जिनभाषित'' का जून अंक मिला है, पढ़ने में अच्छा लगा।

डॉ. कपूरचंद, डॉ. नीलम जैन, डा. स्नेहरानी जैन, श्री सुरेश जैन आई.ए.एस., डॉ. सुरेन्द्र भारती एवं ब्र. संदीप जी सहित अनेक पृष्ठों की सामग्री, विविधवर्णी, रस/ज्ञान दे गई।

आपका सम्पादकीय 'द्रव्य और तत्व में भेदाभेद' पढ़कर, अब तक के मेरे अध्ययन को दिशा मिली, धन्यवाद। पं. रतन लाल बैनाड़ा भारी सूझबूझ के साथ शंकाओं के समाधान प्रस्तुत करते नजर आये, उन्हें विनम्र अभिवादन।

पूरे अंक का सरताज लेख 'निरंतर ज्ञानोपयोग' सर्वाधिक महत्वपूर्ण है, मैं उसके लेखक, संतशिरोमणि आचार्य विद्यासागरजी को नमोस्तु लिखता हूँ।

पृष्ठ-5 पर उनका उप-लेख भी शिक्षापूर्ण है।

सुरेश जैन सरल, जबलपुर

जून का अंक आद्योपांत पढ़कर प्रथम पृष्ठीय आवरण सोनागिर जी देख-देख कर मन को अपार शांति मिली, ''जिनभाषित'' नहीं होता तो घर बैठे गगन चुम्बी मंदिरों, जैन संस्कृति का 60 प्रतिशत लोगों को आभास ही नहीं होता, उनका सोच ही नहीं जाता। अत: प्रबुद्ध वर्ग के लिये पत्रिका अच्छी खुराक है।

सुरेश जैन मारौरा, शिवपुरी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सम्पादकीय

खेद जनक लेख

जैन गजट 3 जुलाई के अंक में श्री गुणवंतजी टोंग्या बड़नगर का लेख 'एक निरर्थक प्रयास आगम एवं पुरातन आचार्यों के अवर्णवाद का' प्रकाशित हुआ है। लेख में प्रो. रतनचन्द जी, भोपाल द्वारा लिखित लेख 'पूजा पाठ संग्रहोक्त और शास्त्रोक्त पूजा विधियों में अंतर' की आलोचना की गई है। इस लेख में आलोच्य लेख के लेखक सम्मान्य प्रोफेसर साहब के प्रति स्थान-स्थान पर जिस प्रकार के अनादरपूर्ण भाषा में निंदा जनक हल्के शब्दों का प्रयोग किया है वह अत्यंत अंवाछित, अशिष्ट और आपत्तिजनक है। लेखक के विचारों से असहमत होकर उनकी आलोचना करने का अधिकार एक पवित्र विचार स्वातन्त्र्य का अधिकार है, किंतु वह आलोचना शिष्ट शब्दों में प्रामाणिक, तथ्यात्मक एवं आलोच्य लेख के लेखक के प्रति समुचित शिष्टाचार प्रदर्शित करते हुए होनी चाहिए। लेख में आलोच्य लेख के विषय की आधार पूर्वक आलोचना की जानी चाहिए न कि लेखक की व्यक्तिगत निंदा। श्री टोंग्या जी ने कहीं कहीं तो प्रोफेसर साहब के प्रति इतने हल्के शब्दों का प्रयोग किया है कि जिनको पढ़ते हुए पाठक को लज्जा का अनुभव होता है। आश्चर्य है लेखक महोदय की लेखनी कैसे इतनी अशिष्ट एवं निष्ठुर हो गई? जब लेखक के पास ठोस आधारभूत विषय लेखन के लिए नहीं रहता है तभी वह खिसियाकर ऐसे अपशब्दों का सहारा ले लेता है। किंतु माननीय श्री टोंग्या जी को यह नहीं भूलना चाहिए कि उनके द्वारा प्रयुक्त अपशब्दों के उत्तर में कोई उनके लिए भी दो चार गुने अपशब्दों का प्रयोग कर सकता है। किंतु प्रोफेसर साहब की गरिमामय सहिष्णुता एवं शालीनता ने श्री टोंग्या जी की अशिष्ट भाषा पर न ध्यान दिया और न उसे स्वीकारा ही है। अतः माननीय श्री टोंग्या जी की निदांत्मक भाषा स्वयं उनके पास ही रह गई है।

प्रो. रतनचन्द्र जी समाज के सम्मान्य मूर्धन्य विद्वान हैं। वे प्रतिष्ठित जैन पत्रिकाओं के संपादक एवं शोधपूर्ण प्रामाणिक आलेखों और पुस्तकों के लेखक हैं। श्री टोंग्या जी के द्वारा प्रयुक्त अपशब्दों से उनके ही अपने परिणाम दूषित हुए हैं। प्रोफेसर साहब की प्रतिष्ठा ऐसे हल्के शब्दों से अप्रभावित रहेगी।

इस लेख में श्री टोंग्या जी आगे बढ़कर जैन आगम के मर्मज्ञ विद्वान कविवर पं. बनारसी दास जी पर भी आक्रमण करने से नहीं चूके हैं। श्री पं. बनारसी दास जी ने भ्रष्ट मुनियों के रूप में मठाधीश बने भट्टारकों द्वारा मध्यकाल में प्रचारित मिथ्या परिपाटियों एवं मिथ्या देवी-देवताओं की पूजा आदि क्रिया कांडों का विरोधकर श्रावकों में तत्व ज्ञान के आधार पर धर्म के भाव पक्ष को स्थापित किया था। यदि कभी समाज में अज्ञान के कारण धार्मिक क्रियाओं में कोई असत् परिपाटी ने स्थान ले लिया तो आचार्य अथवा विज्ञजन सदुपदेश द्वारा उस परंपरागत प्राचीन विकृति को दूर करते हैं। ऐसा ही कुंदकुंद प्रभृति आचार्यों ने किया। ऐसा ही आचार्य शांतिसागर जी ने भी किया। उन्होंने श्रावकों के घरों से ढेरों मिथ्या देवी-देवताओं की मूर्तियों को निकलवाया और सच्चे देव-गुरु-शास्त्र का श्रद्धान कराया। इस प्रकार मिथ्या धार्मिक क्रियाओं और मान्यताओं में श्री पं. बनारसी दास जी ने सुधार कराया, अतः वे जैन समाज के आचार्य सदृश आदर के पात्र हैं। महान् आचार्य नेमीचन्द सिद्धांत चक्रवर्ती ने लिखा है कि सम्यग्दृष्टि जीव अज्ञान के कारण अथवा अल्पज्ञानी गुरुओं के उपदेश के कारण असत् पदार्थ का श्रद्धान कर लेता है किंतु जब विशेष ज्ञानी गुरुओं के संयोग से वस्तु के समीचीन स्वरूप का परिचय मिल जाता है तो पूर्व की श्रद्धा को बदलकर समीचीन स्वरूप की श्रद्धा कर लेता है। यदि वह ऐसा नहीं करता तो वह मिथ्यादृष्टि हो जाता है। (गोम्मटसारजीवकांड गाथा 27-28)सचित्त-अचित्त द्रव्यों से पूजा करने की

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तुलना करने पर तो मानना ही पड़ेगा कि सचित्त द्रव्यों की तुलना में अचित्त द्रव्यों के प्रयोग में कम हिंसा होती है और 'सावद्य लेशो' के सिद्धान्त के अनुसार अचित्त द्रव्य से पूजा श्रेष्ठ सिद्ध होती है। अहिंसा की पालना में आगे बढ़ते हुए श्रावक सचित्त पदार्थों के प्रयोग का त्याग कर देता है। दूसरी प्रतिमा में भी अतिथि संविभाग व्रत व भोगोपभोग परिमाण व्रत के अतिचारों में सचित्त संबंध, सचित सम्मिश्र, सचित्त निक्षेप व सचित्तापिधान को बताया गया है। पूजा और पूजा के द्रव्यों के बारे में लम्बी चर्चा की जा सकती है, किंतु अभी इस लेख में, मैं तो केवल यह कहना चाहता हूँ कि क्या हम धार्मिक विषयों पर आगम, तर्क और अनुमान के आधार पर बिना व्यक्तिगत आक्षेपों के केवल विषय प्रतिपादन के अभ्यासी नहीं बन सकते ? जैन धर्म अनेकांत सिद्धांत के आधार पर हमें विशेषतौर पर विचार सहिष्णु, विनयशील एवं मृदुभाषी होना सिखाता है। विचार भिन्नता संभव है, किंतु उसके आधार पर मन में द्वेष भावना उत्पन्न कर विरोधी विचार वालों के प्रति अपनी भाषा को विकृत कर अपशब्दों का प्रयोग सर्वथा अनुचित है।

दिगम्बर जैन समाज की प्रमुख प्रतिनिधि संस्था दि. जैन महासभा के मुख पत्र जैन जगट में ऐसा एक मूर्धन्य विद्वान के प्रति व्यक्तिगत निंदात्मक लेख छापा जाना खेदजनक है। विषय के पक्ष विपक्ष में शालीन भाषा में खोज परक लेख पत्रिका की शोभा बढ़ाते हैं, किंतु ऐसे निंदात्मक लेखों से न केवल पत्रिका किंतु संस्था की भी छवि धूमिल होती है।

विशेष बात तो यह है कि उक्त लेख जैन गजट को लेखक के द्वारा नहीं भेजा गया है। अपितु जैन गजट ने ''आदित्य संदेश'' पत्रिका से साभार उद्धृत कर छापा है। दूसरी पत्रिका से लेकर लेख छापने से स्पष्ट सिद्ध होता है कि जैन गजट परिवार ने उस लेख को महत्वपूर्ण और संस्था की रीति-नीति के अनुकूल समझकर विशेष रूचि लेकर छापा है।

तथापि मेरा विश्वास है कि जैन गजट के सुधी संपादक जी की दृष्टि में लाए बिना यह लेख छापा गया होगा। मेरा तो सभी जैन पत्र पत्रिकाओं के संपादकों से यह आग्रह पूर्वक निवेदन है कि वे सम्पादकीय नैतिक एवं व्यावहारिक उत्तरदायित्वों को ध्यान में रखते हुए किसी भी विद्वान लेखक अथवा साधुओं की आलोचना में निंदात्मक हल्के शब्दों के प्रयोग वाले लेखों का, जो पूरे समाज की छवि को धूमिल करे, अपनी पत्र-पत्रिकाओं में स्थान नहीं देवें एवं पारस्परिक शालीन व्यवहार को प्रोत्साहित करें।

मूलचन्द लुहाड़िया

पाठकों के सुझावों पर टिप्पणी

कुछ सुधी पाठकों ने दिगम्बर प्रतिमा की पहिचान विषयक लेख, प्रति लेखों को व्यक्तिगत सलाह, टीका टिप्पणी मानते हुए पत्रिका में प्रकाशित किया जाना उचित नहीं माना है। इस संबंध में निवेदन है कि लेखों में कोई व्यक्तिगत विषयों की चर्चा नहीं की गई है। दिगम्बर प्रतिमा के स्वरूप संबंधी लेख सम्यग्दर्शन के कारण सच्चे देव के स्वरूप से संबंध रखता है तथा दिगम्बर जैन संस्कृति के संरक्षण की प्रेरणा देता है।

अतः अपनी श्रद्धा की दृढ़ता एवं संस्कृति के संरक्षण के लिए जिन प्रतिमा के स्वरूप की जानकारी, भगवान् जिनेन्द्र के स्वरूप की जानकारी के समान ही अत्यंत उपयोगी, प्रयोजनभूत तथा महत्वपूर्ण है। यह ठीक है कि लेखों में किसी के मत की समीक्षा करते समय शालीन, शिष्ट और विनय पूर्ण भाषा का प्रयोग होना चाहिए। किसी भी स्थिति में निदांत्मक शब्दों का प्रयोग नहीं होना चाहिए।

संपादक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वर्तमान में अहिंसा की उपयोगिता

डॉ. श्रेयांसकुमार जैन, बड़ौत

अहिंसा ही जैनधर्म की आधारशिला है। द्रव्य दृष्टि से सभी शुद्ध जीव तत्त्व एक समान हैं। परन्तु कर्मों के आवरण से चार गतियों की चौरासी लाख योनियों में परिभ्रमण करते हैं, फिर भी कोई प्राणी चाहे वह छोटे से छोटा हो या बड़े से बड़ा हो, चाहे वह नाली का कीड़ा ही क्यों न हो, यह नहीं चाहता कि उसे कोई कष्ट दे। सभी प्राणी कष्टों से भयभीत रहते हैं, अपने प्राणों की रक्षा चाहते हैं। अत: यह भी आवश्यक है कि प्रत्येक प्राणी पर दया करनी चाहिए।

अहिंसा का विस्तार अनेक सन्दर्भों में होता है, जिनमें से कुछ ज्ञातव्य हैं-

आत्महत्या न करना : वर्तमान में मानव अनेक उलझनों में उलझकर तनावग्रस्त हो जाता है जिससे वह आत्महत्या जैसे जघन्य पाप को करने के लिए उद्यत हो जाता है, किन्तु जिसके हृदय में अहिंसा के बीज होते हैं, वह कितनी भी विपत्तियाँ आयें फिर भी आत्महत्या जैसे निघृण कार्य में प्रवृत्त नहीं होता है। यही प्रवृत्ति हिंसा की विस्तारक है।

परहत्या न करना : कभी-कभी क्रोधादि के निमित्त से ऐसे अवसर आ जाते हैं कि मनुष्य विवेक खो देता है और दूसरों को मार डालता है। विवेक खोकर जो दूसरों के प्राणों तक का हरण कर लिया जाता है, वह महा पाप है उससे बचना ही आवश्यक है।

भ्रूण हत्या न करना : आज विश्व में भ्रूण हत्या अत्यधिक तेजी से बढ़ रही है, वह एक गम्भीर स्थिति है, अत्यधिक आधुनिक उपकरणों के निर्माण ने इस समस्या को विकराल रूप प्रदान कर दिया है, क्योंकि उनके परीक्षण के द्वारा भ्रूण हत्या का चक्र सा चल रहा है। अमेरिका में एक फिल्म बनी है, सायलेंट क्रीज। इसने तहलका मचा दिया। उसमें यह दिखाया गया है कि भ्रूण हत्या का क्या परिणाम होता है। तीन माह के भ्रूण/गर्भस्थ शिशु को जब मारा जाता है, तब वह रोता है, चीखता और चिल्लाता है। इतना करुणाप्रद दृश्य होता है कि देखते ही मानस में तीव्र बैचेनी पैदा हो जाती है। दृष्टा पूर्णरूप से विचलित हो जाता है। इसके आधार पर अमेरिकी सरकार ने भ्रूण हत्या पर प्रतिबन्ध लगा दिया, किन्तु भारत में आज भी इस विकृति से लोग अपने को नहीं बचा पा रहे हैं। इस विकृति का मूल कारण अहिंसा को जीवन दर्शन का अंग न बनाना है, जो संस्कृति से जुड़े हुए लोग हैं वे अहिंसा को जीवन का अभिन्न अंग मानकर चलते हैं, जिस कारण भ्रूण हत्या जैसे जघन्य कृत्य का पूर्णरूप से अंत हो जाएगा।

प्रसाधन सामग्री का विवेक : अहिंसा का ही प्रभाव होता है कि मानव अपनी साज सज्जा हेतु अहिंसक उपकरणों का ही प्रयोग करता है, किन्तु अहिंसा से अपरिचित प्राणी क्रूरता पूर्ण ढंग से तैयार की गई प्रसाधन सामग्री का उपयोग करते हैं। अहिंसा की लोक जीवन में व्यावहारिकता का ही परिणाम होता है कि हिंसक संसाधनों से तैयार की हुई औषधियों/प्रसाधन की सामग्री का उपयोग कम होता है या बिलकुल भी नहीं किया जाता है। अहिंसा सिद्धान्त के प्रचार-प्रसार के फलस्वरूप आज कुछ ऐसी संस्थाएँ बनी हैं, जो अमेरिका, यूरोप, भारत आदि देशों में पूर्ण सक्रिय हैं और वे इस बात पर बल दे रहीं हैं- क्रूरता पूर्ण प्रसाधन सामग्री के निर्माण को बन्द किया जाय और कोई भी उनका प्रयोग न करे।

पर्यावरण विज्ञान का रहस्य : अहिंसा सिद्धान्त को जीवन में अपनाने पर ही पर्यावरण विशुद्ध रह सकता है। अनर्थक हिंसा से बचो। यह माना कि हिंसा से बचना सरल नहीं है किन्तु मनुष्य विवेक से काम ले तो अनर्थक हिंसा से बहुत कुछ बचा जा सकता है। जहाँ अनर्थक हिंसा की बात आती है, वहाँ पर्यावरण प्रदूषण की बात भी आ जाती है। यह पर्यावरण की समस्या अनर्थ हिंसा से उपजी समस्या है। अहिंसा के अपनाने से ही अनर्थ हिंसा से मानव बच सकता है। वातावरण को प्रदूषित होने से बचाने कि लिए अहिंसा ही कार्यकारी है, यही इसकी व्यावहारिकता है।

आधुनिक परिप्रेक्ष्य में अहिंसा की उपयोगिता को उक्त विविध सन्दर्भों में समझना आवश्यक है। शुद्ध जीवन शैली में विश्वास रखने वाला अहिंसा को इस रूप में अपनाए की हिंसा की ज्वालाएं अहिंसा की शीतल फुहार से शान्त हो जायें। अहिंसा के द्वारा हिंसा के शमन का क्रम यदि अनवरत चले तो इक्कीसवीं शताब्दी में श्वांस लेने वाला मनुष्य अहिंसक समाज की संरचना करने में सफल होगा।

विज्ञान ने संहारक अस्त्र-शस्त्रों और युद्ध के उपकरणों का आविष्कार करके विश्व में अशान्ति को बढ़ावा दिया है। अत्याधुनिक अस्त्र-शस्त्रों की होड़ बढ़ती जा रही है, इनके बल पर लोगों को आंतकित किया जा रहा है। पुरातन काल से ही अहिंसा का अवलम्बन लेकर मानव शांति के लिए प्रयत्न कर रहा था किन्तु विज्ञान ने हिंसक संसाधनों के निर्माण के माध्यम से अशान्ति और संघर्ष को बढ़ाने में योगदान किया है। यह वास्तविकता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

है, शस्त्रास्त्र होंगे तो मनुष्य उन्हें चलाने और प्रयोग करने का प्रयत्न करेगा ही, जैसा भारत में ही पोखरन में परमाणु परीक्षण किया गया, तो समस्त विश्व में हलचल पैदा हो गयी। पोखरन में हुए परमाणु परीक्षण के विरोध में पाकिस्तान ने भी परमाणु परीक्षण कर अपनी वृत्ति का परिचय दिया। भारतीय मानस में अहिंसा विद्यमान होने के कारण यद्यपि हिंसक उपकरण भी मार काट के लिए प्राय: प्रयोग नहीं किये जाते हैं तथापि क्रूर प्रकृति वाले लोगों के द्वारा तो शस्त्रास्त्रों का प्रयोग अपनी अहंपुष्टि और स्वार्थपूर्ति के लिए किया ही जाता है। अत: विज्ञान प्रदत्त हिंसक उपकरण संघर्ष के निमित्त होते ही होते हैं।

विज्ञान का महत्त्व अहिंसा के साथ ही है क्योंकि अहिंसा के साथ विज्ञान की शक्ति जुड़ जायेगी तो सम्पूर्ण संसार स्वर्ग सहज सुखद हो जायेगा। भौतिक उन्नति के साथ आत्मोन्नति भी संभव होगी। विज्ञान से प्राणियों की सुरक्षा संभव नहीं किन्तु अहिंसा प्राणियों में वात्सल्य उत्पन्न करने वाली है, अत: पारस्परिक सौहार्द की वृद्धि भी इसके द्वारा होती है, जिससे एक दूसरा परस्पर में भक्षक न बनकर एक दूसरे का रक्षक बनेगा। इसी कारण विश्व के समस्त प्राणियों की सुरक्षा हो सकती है। अहिंसा के माध्यम से मनुष्य स्वयं जीवित रहकर दूसरों को जीवित रहने में सहयोग कर सकता है। अहिंसा का प्रेम, करुणा, दया एवं सेवा के रूप में प्रयोग किये जाने से आनन्द प्राप्त होता है। हृदय में प्रसन्नता की अनुभूति होती है। बैर-विरोध, द्वेष-घृणा का समापन होता है। इसका सहारा लेकर स्थायी रूप से सुख-शांति और जीवन की सुरक्षा प्राप्त की जा सकती है।

चतुर्विध आराधना का पर्व : चातुर्मास

ब्र. संदीप 'सरल'

श्रमण जैन परम्परा में अनादिकाल से वर्षायोग / चातुर्मास की परम्परा अनवरत रूप से चली आ रही है। चातुर्मास का प्रमुख उद्देश्य अहिंसा धर्म का पालन करना है। पूर्ण अहिंसा धर्म के पालन करने वाले साधक गण वर्षावास के अर्न्तगत एक स्थान पर रहकर चार प्रकार की आराधना करते हुए स्व-पर कल्याण में संलग्न रहते हुए कल्याणेच्छुक श्रावक जनों को भी कल्याण का रास्ता प्रशस्त किया करते हैं।

धन्य हैं वे नगर के गौरवशाली पुण्यशाली श्रावकजन जहाँ पर इस चातुर्मास पर्व में गुरूओं का पावन सामीप्य प्राप्त हुआ है। चातुर्मास के इस पावन अवसर पर अनेक प्रकार के आयोजन-विधान, संगोष्टियाँ, पुस्तक प्रकाशन, सम्मान समारोह आदि महत्वपूर्ण कार्य प्रारम्भ होंगे।

चातुर्मास के चार चरण

(अ) दर्शनाराधना - दर्शन अर्थात् सम्यग्दर्शन के विषयभूत देव-शास्त्र-गुरु की उपासना जीवादि सात तत्वों का स्वरूप समझते हुए उस पर अटूट श्रद्धान करना। हम धर्म के माध्यम से रागी द्वेषी देवताओं की उपासना करते हुए अपनी विराधना तो नहीं कर रहे हैं। दर्शन गुण से युक्त सम्यग्दृष्टि की भी यथायोग्य अनुशंसा करना दर्शन आराधना है।

(ब) ज्ञानाराधना - स्वाध्याय के माध्यम से ज्ञान को प्राप्त करते हुए स्व को प्राप्त करना ज्ञानाराधना कहलाती है। चातुर्मास के दौरान साधु, त्यागी, व्रतियों का सानिध्य प्राप्त होते ही ज्ञान की गंगा बहने लगती है। अत: हमारा परम कर्त्तव्य बनता है कि हम उसका पूरा-पूरा लाभ उठाएँ। अपने मंदिर में स्थित ग्रन्थों का संरक्षण-संवर्द्धन करना यह भी ज्ञानाराधना है।

(स) चारित्राराधना - पाँच महाव्रत, पाँच समिति और तीन गुप्तियों को तेरह प्रकार का चारित्र बतलाया है, इस प्रकार के चारित्र को प्राप्त करने की भावना से चारित्रारूढ़ साधकों की सेवा करना चारित्राराधना है। श्रावक भी अपने यथायोग्य नियमों का पालन करते हुए चारित्राराधना के क्षेत्र में आगे बढ़ता है। आज का युवावर्ग नैतिकता, सदाचार, श्रावकाचार से काफी गिर गया है। अत: संतों का कर्त्तव्य बनता है कि बाह्य आडम्बर पूर्ण प्रदर्शनकारी खर्चीले आयोजनों की अपेक्षा युवावर्ग को सदाचार से जोड़ा जाए तो चातुर्मास की सबसे बड़ी सफलता है।

(द) तपाराधना - इच्छाओं का निरोध करना, अनशनादि बारह प्रकार के तप करना तपाराधना कहलाती है। इस पर्व पर साधक भी निस्पृह भाव से आत्म कल्याण की इच्छा से शक्ति के अनुसार व्रत-उपवास आदि कर तपाराधना में संलग्न रहते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जैन गृहस्थाचार परम्परा का क्रमिक विकास

डॉ. शीतलचन्द जैन

श्रावक या गृहस्थ के लिए प्राकृत ग्रन्थों में सावय, सावग और उपासग तथा संस्कृत ग्रन्थों में श्रावक, उपासक और सागार शब्दों का प्रयोग किया जाता है।

उक्त आधार पर गृहस्थ के धर्म को सावयधम्म, श्रावकाचार, उपासकाचार, सागार धर्म आदि नाम दिये गये तथा गृहस्थाचार विषयक ग्रंन्थों के श्रावकाचार, उपासकाध्ययन, उपासकाचार, सागारधर्मामृत आदि नाम रखे गये हैं। कुछ अन्य ग्रन्थ जिनमें श्रावकाचार का वर्णन किया गया है, इनसे भिन्न नामों से भी लिखे गये। जैसे समन्तभद्र का रत्नकरण्डक, अमृतचन्द्र का पुरुषार्थ-सिद्धयुपाय और पद्मनन्दि की पंचविंशतिका।

श्रावक शब्द की व्युत्पत्ति -

श्रावक शब्द की व्युत्पत्ति करते हुए आशाधर ने लिखा है-

शृणोति गुर्वादिम्यो धर्ममिति श्रावकः

अर्थात् जो श्रद्धापूर्वक गुरु आदि से धर्म श्रवण करता है वह श्रावक है।

सागारधर्मामृत में सागार की परिभाषा देते हुए आशाधर कहते हैं कि सागार-गृहस्थ अनादिकालीन अविद्या के दोष से उत्पन्न चार संज्ञाओं-आहार, निद्रा, भय, मैथुन के ज्वर से पीड़ित, सदा आत्म ज्ञान से विमुख तथा विषयों में उन्मुख होता है।

अनादि अविद्या के साथ बीज और अंकुर की तरह परम्परा से चली आयी ग्रन्थसंज्ञा को छोड़ने में असमर्थ प्रायः विषयों में मूर्छित होता है।

श्रावक के लिए सम्यक्त्व की अनिवार्यता

आचार्यों ने श्रावक के लिए सम्यक्त्व के लिए अनिवार्य बताते हुए कहा है कि इस अविद्या या मिथ्यात्व का पर्दा हटा तो आत्मज्ञान का उज्ज्वल प्रकाश होने लगता है। पर यह इतना आसान नहीं है। इसके लिए आसन्न भव्यता, कर्महानि, संज्ञित्व, विशुद्धि तथा देशना आवश्यक है।

श्रावक की पूर्ण आचार संहिता

आशाधर ने एक सूत्र में पूरे श्रावकाचार को इस प्रकार कहा है

'सम्यक्तवममलममलान्यणुगुणशिक्षाव्रतानिमरणान्ते।
सल्लेखना च विधिना पूर्ण सागारधर्मोऽयम्॥'

अर्थात निर्मल सम्यग्दर्शन, निरतिचार अणुव्रत, गुणव्रत, शिक्षाव्रत और मरण समय विधिपूर्वक सल्लेखना, यह सम्पूर्ण सागारधर्म है।

आगे लिखा है कि पंच परमेष्ठी का भक्त प्रधानता से दान और पूजन करने वाला भेद ज्ञान रुपी अमृत को पीने का इच्छुक तथा मूलगुण और उत्तरगुणों को पालन करने वाला व्यक्ति श्रावक कहलाता है।

अन्तरंग में रागादिक के क्षय की हीनाधिकता के अनुसार प्रकट होने वाली आत्मानुभूति से उत्पन्न सुख का उत्तरोत्तर अधिक अनुभव होना ही है स्वरूप जिनका ऐसे और बहिरंग में त्रसहिंसा आदिक पांचों पापों से विधिपूर्वक निवृत्ति होना है स्वरूप जिनका ऐसे ग्यारह प्रतिमाओं को क्रमशः देशविरत नामक पंचम गुणस्थान के दार्शनिक आदि स्थानों-दरजों में मुनिव्रत का इच्छुक होता हुआ जो सम्यग्दृष्टि व्यक्ति किसी एक स्थान को धारण करता है उसको श्रावक मानता हूँ अथवा उस श्रावक को श्रद्धा की दृष्टि से देखता हूँ।

श्रावक के भेद

जैन वाङ्मय में श्रावक के भेदों का विवेचन मुख्यतया निम्नलिखित चार आधारों पर प्राप्त होता है-

1. गुणस्थानों के आधार पर।
2. व्रतों के आधार पर।
3. प्रतिमाओं के आधार पर।
4. आशाधर के आधार पर।

इस प्रकार श्रावक के भेद निम्नप्रकार से किये जा सकते हैं-

1. गुणस्थानों के आधार पर दो भेद-

1. अविरत सम्यग्दृष्टि अर्थात् चतुर्थ गुणस्थानवर्ती।
2. देशविरत अर्थात् पंचम गुणस्थानवर्ती।

2. व्रतों के आधार पर तीन भेद-

1. व्रत रहित या अव्रती श्रावक।
2. अणुव्रती श्रावक।
3. व्रती अर्थात् बारह व्रतों का पालन करने वाला श्रावक।

3. प्रतिमाओं के आधार पर ग्यारह भेद-

1. दार्शनिक या प्रथम प्रतिमाधारी श्रावक।
2. व्रतिक या दूसरी प्रतिमा को धारण करने वाला श्रावक।

इस प्रकार शेष नव प्रतिमाओं के आधार पर आगे के नव भेद किये जा सकते हैं।

4. आशाधर के आधार पर तीन भेद-

1. पाक्षिक श्रावक।
2. नैष्ठिक श्रावक।
3. साधक श्रावक।

प्राचीन ग्रंथों का विवेचन गुणस्थानों, व्रतों और ग्यारह प्रतिमाओं के आधार पर ही मिलता है। आशाधर ने इस विवेचन को अधिक व्यापक और व्यवस्थित करने की दृष्टि से श्रावक के उपर्युक्त पाक्षिक आदि तीन भेद किये।

पाक्षिक श्रावक संयम के लिये उद्यमी होता है, करता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नहीं, नैष्ठिक करता है और साधक पूर्ण करता है प्रमुख रूप से यहाँ पर पाक्षिक श्रावक की आचार संहिता पर विचार करते हैं।

पाक्षिक श्रावक का क्या आचार है, इसका विवेचन आशाधर ने सागार धर्मामृत के द्वितीय अध्याय में किया है।

नैष्ठिक श्रावक प्रतिमाधारी श्रावक कहलाता है और सल्लेखना धारण करने वाला साधक श्रावक।

गृहस्थ की आचार संहिता का उपर्युक्त विवेचन एकदूसरे से सर्वथा निरपेक्ष नहीं है।

ग्यारह प्रतिमाओं के अन्तर्गत बारह व्रत समाहित हो जाते हैं। पाक्षिक आदि भेदों के अन्तर्गत बारह व्रत और ग्यारह प्रतिमाएँ भी समाहित हो जाती हैं। गुणस्थानों की दृष्टि से भी इसमें कोई विरोध उपस्थित नहीं होता।

गृहस्थाचार विषयक साहित्य के पर्यालोचन से ऐसा प्रतीत होता है कि विकासक्रम की दृष्टि से ग्यारह प्रतिमाओं तथा पाक्षिक आदि के रूप में श्रावक का जो वर्गीकरण किया गया है, वह श्रावकाचार को व्यवस्थित रूप देते समय किया गया है। मूलतः श्रावक के लिए नियम और व्रताचरण का ही विधान था। यद्यपि आचार्य कुन्दकुन्द द्वारा किये गये ग्यारह प्रतिमाओं के उल्लेख से यह भी स्पष्ट प्रतीत होता है कि ग्यारह भेदों का वर्गीकरण बहुत प्राचीन समय में हो चुका था।

बारह व्रतों के अन्तर्गत पांच अणुव्रत, तीन गुणव्रत और चार शिक्षाव्रतों का समावेश किया जाता है। अणुव्रतों के अन्तर्गत अहिंसाणुव्रत, सत्याणुव्रत, अचौर्याणुव्रत, ब्रह्मचर्याणुव्रत और परिग्रह परिमाणाणुव्रत बताये गये हैं। इनके विषय में प्राचीनतम सन्दर्भ से लेकर आज तक विशेष प्रकार का मतभेद दृष्टिगोचर नहीं होता। गुणव्रतों और शिक्षाव्रतों के अन्तर्गत जिन व्रतों की गणना की गयी है, उनमें नामों में भेद प्राप्त होता है।

सामान्य गृहस्थ या पाक्षिक श्रावक की आचार संहिता -

पाक्षिक श्रावक संयम के लिये उद्यमी होता है, करता नहीं, नैष्ठिक करता है और साधक पूर्ण करता है। प्रमुख रूप से यहाँ पर पाक्षिक श्रावक की आचार संहिता पर विचार करते हैं- आशाधर ने सामान्य गृहस्थ को पाक्षिक श्रावक नाम दिया है। उनके अनुसार पाक्षिक श्रावक जिनेन्द्र भगवान् की आज्ञा को शिरोधार्य करके, हिंसा को छोड़ने के लिए मद्य, मांस, मधु और पांच उदुम्बर फलों के सेवन का त्याग करता है। पांच पापों और सात व्यसनों को छोड़ने का यथाशक्य अभ्यास करता है। यथाशक्ति जिन भगवान् की पूजा करता है। जिनबिम्ब, जिनमंदिर, मुनियों के लिए वसतिका, स्वाध्यायशाला, भोजनशाला, औषधालय आदि का निर्माण कराता है। गुरुओं की सेवा करता है। अपने सुयोग्य साधर्मी श्रावक को ही अपनी कन्या देता है। मुनियों को दान देता है इस बात का प्रयत्न करता है कि मुनियों की परम्परा बराबर चलती रहे और गुणवान हो। रात्रि में केवल पानी, औषधि और पान, इलायची आदि मुख-शुद्धिकारक पदार्थ ही लेता है। ऐसा कोई आरम्भ नहीं करता जिसमें संकल्पी हिंसा हो। तीर्थयात्रा आदि करता है। सागार धर्मामृत के दूसरे अध्याय में पाक्षिक श्रावक का विस्तार से विवेचन किया गया है।

सामान्यतया पाक्षिक श्रावक को चौथे गुणस्थान वाला अव्रती सम्यग्दृष्टि कहा जाता है। अप्रत्याख्यानावरण चारित्र-मोहनीय कर्म का क्षयोपशम न होने के कारण यद्यपि यह व्रत धारण नहीं कर सकता तथापि उसका आचरण सर्वथा अनियन्त्रित, उच्छंखल और सामाजिक दृष्टि से अहितकर नहीं होता। ऐसा प्रतीत होता है कि ऐसे श्रावक को ध्यान में रखकर ही आचार्यों ने अष्टमूलगुणों के पालन तथा सप्तव्यसन-त्याग आदि का विवेचन किया है।

श्रावक के मूल गुण -

जैन वाङ्मय के पर्यालोचन से श्रावक के मूलगुणों के सम्बन्ध में जो जानकारी मिलती है उसे संक्षेप में इस प्रकार व्यक्त किया जा सकता है-

1. कई प्राचीन ग्रन्थों में श्रावक के व्रतों, नियमों आदि का उल्लेख तो किया गया है, किन्तु स्वतन्त्र रूप से मूलगुणों का उल्लेख या वर्णन नहीं किया गया। श्वेताम्बर आगमों में भी मूलगुणों का वर्णन नहीं मिलता।

2. मूल गुणों के सम्बन्ध में प्राचीनतम सन्दर्भ से लेकर 17 वीं एवं 18 वीं शताब्दी तक के ग्रन्थों में जो विवरण प्राप्त होता है उसके अनुसार मूलगुणों की निम्नलिखित चार परम्पराएँ प्राप्त होती हैं-

1. पांच अणुव्रतों का पालन तथा तीन मकार का त्याग।
2. पांच अणुव्रतों का पालन तथा मांस, मद्य और मधु त्याग।
3. पांच उदुम्बर फलों तथा तीन मकारों का त्याग।
4. आप्तनुति, दया, जलगालन, अरात्रिभोजन, उदुम्बर फलों का त्याग और तीन मकारों का त्याग।

इस विवरण को निम्न प्रकार अंकित किया जा सकता है-

समन्तभद्र और शिवकोटि	जिनसेन चामुण्डराय सोमदेव आशाधर	अमृत, अमितगति आशाधर, श्रावकधर्मदोहा देवसेन, मेघावी, सकलकीर्ति राजमल्ल, सोमसेन	आशाधर
पांच अणुव्रत तीन मकार त्याग	पांच अणुव्रत मांस विरति मद्य विरति मधु विरति	पांच उदुम्बर तथा तीन मकार त्याग	आप्तनुति, दया, जलगालन, अरात्रिभोजन पांच उदुम्बर त्याग, तीन मकार त्याग

श्रावक के मूल गुणों का विवेचन करते हुए आचार्यों ने मद्य, मांस, मधु, द्यूत के दोषों का विस्तार से वर्णन किया है। रात्रिभोजन, अगालित जल तथा उदुम्बर फलों के सेवन में हिंसा होने के कारण इनके त्याग की भी गणना मूल गुणों के अन्तर्गत की गयी है।

उदुम्बर फलों के अन्तर्गत बड़, पीपल, उमर, कठूमर तथा पाकर फल के त्याग की बात कही गयी है। इन्हें क्षीरीवृक्षफल अर्थात जिन वृक्षों से दूध निकलता है, ऐसे वृक्षों के फल भी कहा गया है। फलों के नामों में सामान्य अन्तर होने पर भी सभी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ग्रन्थकारों ने इन्हें हिंसा का कारण होने से त्याज्य बताया है।

आशाधर ने मधु की तरह नवनीत को भी जीव-बहुल होने के कारण त्याज्य बताया है। यह भी कहा है कि पाक्षिक श्रावक को स्थूल-हिंसा, अनृत, स्तेय, मैथुन तथा परिग्रह त्याग का भी अभ्यास करना चाहिए।

ऐतिहासिक दृष्टिसे मूलगुणों के सम्बन्ध में विचार करने पर निम्नलिखित विवरण प्राप्त होता है-

आचार्य कुन्दकुन्द ने चारित्रपाहुड़ में चारित्र को सागार और निरागार के भेद से दो प्रकार का बतला कर सागार को सग्रन्थ और निरागार को परिग्रह रहित कहा है।

देशविरत श्रावक के ग्यारह भेदों का उल्लेख करके कुन्दकुन्द ने पांच अणुव्रत, तीन गुणव्रत और चार शिक्षाव्रतों को सागार का संयमाचरण बतलाया है। आगे कहा गया है कि इस प्रकार हमने सावयधम्म संयमाचरण का पूर्ण निरूपण किया है। कुन्दकुन्द ने श्रावक के मूलगुणों का उल्लेख नहीं किया।

गृद्धपच्छ उमास्वामी कृत तत्वार्थसूत्र में श्रावक के बारह व्रतों का तो विवरण है। किन्तु उसमें भी मूल गुणों का उल्लेख नहीं है।

तत्वार्थसूत्र के टीकाकार पूज्यपाद ने सर्वार्थसिद्धि में, भट्ट अकलंक ने तत्वार्थराजवार्तिक में और विद्यानन्द ने तत्वार्थश्लोकवार्तिक में मूलगुणों का कोई उल्लेख नहीं किया।

जटासिंहनन्दि के वरांगचरित के बाईसवें अध्याय में श्रावक के बारहव्रत गिनाये हैं, किन्तु मूलगुणों का कोई उल्लेख नहीं है और न मूलगुणों के अन्तर्गत वस्तुओं का ही प्रकारान्तर से कोई उल्लेख है। दान, पूजा, तप और शील को श्रावकों का धर्म बतलाया गया है।

रविषेण वि.सं.734 के लगभग ने अपने पद्मचरित्र के चौदहवें पर्व में श्रावक धर्म का निरूपण किया है। उसमें बारह व्रतों का ही निरूपण किया गया है। मधु, मांस, जुआ, मद्य, रात्रि-भोजन और वेश्या-संगम के त्याग को नियम कहा है, किन्तु मूलगुणों का स्वतन्त्र रूप से कोई उल्लेख नहीं है।

आगे इसका विवेचन करते हुए रात्रिभोजन वर्जन पर बहुत जोर दिया गया है। आगे लिखा है कि जो मनुष्य मांस, मद्य, रात्रिभोजन, चोरी और पर स्त्री का सेवन करता है वह अपने इस जन्म और पर जन्म को नष्ट करता है।

जिनसेन ने वि.सं. 840 में अपने हरिवंशपुराण के अठारहवें सर्ग में श्रावकधर्म का वर्णन करते हुए पद्मचरित्र की तरह श्रावक के बारह व्रतों को गिना कर अन्य में लिखा है मांस, मधु, मद्य, द्यूत और उदुम्बरों को छोड़ने तथा वेश्या और पर स्त्री के साथ भोग का त्याग करने आदि को नियम कहते हैं। इसके पूर्व दसवें सर्ग में भी गृहस्थ के पांच अणुव्रतों को बतलाकर दान, पूजा, तप और शील को गृहस्थों का धर्म बतलाया है। यद्यपि ऊपर कहे गये नियम में मूलगुणों की परिगणना हो जाती है, किन्तु मूलगुण रूप से उल्लेख हरिवंशपुराण में भी नहीं है।

कार्तिकेयानुप्रेक्षा में धर्मानुप्रेक्षा का वर्णन करते हुए ग्यारह प्रतिमाओं का निरूपण किया गया है। पहली प्रतिमा का स्वरूप बतलाते हुए लिखा है कि जो बहुत त्रस जीवों से युक्त मद्य, मांस आदि निन्दित वस्तु का सेवन नहीं करता, वह दर्शन प्रतिमा का धारी श्रावक है।

इसी तरह पहली प्रतिमा वाले के लिए त्याज्य रूप से मद्य, मांसादिक का उल्लेख किया गया है, किन्तु मूलगुण का स्पष्ट उल्लेख नहीं है।

वसुनन्दि श्रावकाचार 12 वीं शती अनुमानित में पहली प्रतिमा का स्वरूप बतलाते हुए पांच उदुम्बर और सात व्यसन के त्यागी को दर्शन प्रतिमा का धारी श्रावक बतलाया है। आगे सात व्यसनों का विवेचन करते हुए मद्य, मांस की बुराईयाँ बतायी हैं। साथ ही मधु की भी बुराईयाँ बतलायी हैं। इस प्रकार अष्ट मूलगुण का निर्देश तो नहीं तथापि ग्रन्थकार को पहली प्रतिमा धारी के द्वारा पांच उदुम्बर और तीन मकारों का त्याग इष्ट है, यह स्पष्ट है।

मूलगुणों का उल्लेख और उनका विवेचन

श्रावक के अष्टमूलगुणों का सर्वप्रथम स्पष्ट निर्देश स्वामी समन्तभद्र रचित रत्नकरण्डक में मिलता है। उसमें लिखा है जिनेन्द्रदेव मद्य, मांस और मधु के त्याग के साथ पांच अणुव्रतों को गृहस्थ के अष्टमूलगुण कहते हैं।

चामुंडराय 11 वीं शती ने चारित्रसार में तथा ''चोक्तं महापुराणे'' लिख कर निम्नलिखित श्लोक उद्धृत है-

''हिंसासत्यस्तेयाब्रह्मपरिग्रहाच्च बादरभेदात्।
द्यूतान्मांसान्मद्याद्विरति गृहिणोऽष्ट सन्तथमी मूलगुणाः॥''

अर्थात् स्थूल हिंसा, स्थूल झूठ, स्थूल चोरी, स्थूल अब्रह्म और स्थूल परिग्रह तथा जुआ, मांस और मद्य से विरति, ये गृहस्थों के आठ मूलगुण हैं।

आशाधर 13 वीं शती ने अपने सागार धर्मामृत तथा उसकी टीका में भी महापुराण के उक्त मत का निर्देश किया है और टिप्पणी में उक्त श्लोक उद्धृत किया है, किन्तु जिनसेन कृत महापुराण में उक्त श्लोक नहीं मिलता और न उक्त श्लोक के द्वारा कहे गये आठ मूलगुण ही मिलते हैं। अड़तीसवें पर्व में व्रताचरण क्रिया का वर्णन करते हुए लिखा है कि मधु और मांस का त्याग, पांच उदुम्बर फलों का त्याग और हिंसादि का त्याग ये उसके सार्वकालक सदा रहने वाले व्रत हैं। इसमें अष्टमूलगुण शब्द का व्यवहार नहीं किया गया है और मधु के त्याग का विधान किया है, जबकि मद्य को नहीं गिनाया है। अतः चारित्रसार में उद्धृत उक्त श्लोक के साथ इसकी संगति नहीं बैठती।

आ. अमृतचन्द ने पुरूषार्थसिद्धयुपाय में लिखा है कि हिंसा से बचने की अभिलाषा रखने वाले पुरूषों को सबसे पहले मद्य, मांस, मधु और पांच उदुम्बर फलों को छोड़ने से ही मनुष्य की बुद्धि निर्मल होती है और तभी वह जैन धर्म के उपदेश का पात्र होता है। यद्यपि इन्हें ग्रन्थकार ने मूलगुण नहीं कहा, किन्तु उन्हें अभीष्ट यही प्रतीत होता है कि ये श्रावक के मूलगुण हैं।

प्राचार्य, स्नातकोत्तर संस्कृत महाविद्यालय,
जयपुर (राज.)

क्रमशः ...

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

काव्य, दर्शन और अध्यात्म की अन्यतम उपलब्धि: मूकमाटी

डॉ. के.एल. जैन

आचार्य विद्यासागर जी ने विपुल साहित्य का सृजन किया है, जिसमें जनकल्याण और लोककल्याण की भावना समाहित है। उन्होंने शास्त्रों के अथाह सागर से विशेषत: कविता के मोती चुनने का जो भगीरथ प्रयास किया है, वह काफी अद्‌भुत और विस्मयकारी है। काव्यशास्त्र की दृष्टि से ऐसा माना गया है कि अनुभूति की घनीभूत तीव्रता ही कविता को जन्म देती है। भावों की यही तीव्रानुभूति आचार्य श्री की कविताओं में भी देखने को मिलती है। यद्यपि वस्तुतत्व की दृष्टि से इन कविताओं का मूलस्वर भले ही आध्यात्म रहा हो, लेकिन इन कविताओं में जीवन के जिन उदात्त आदर्शों का निरूपण किया गया है, वास्तव में वही कविता का प्राणतत्व माना गया है। क्योंकि कविता के मूल में मानव जीवन और उसके अन्त: करण में उठने वाले भावों को ही कवि शब्द-बद्ध करता है और यही कार्य आचार्य श्री ने भी किया है।

यहाँ पर हम आचार्य श्री द्वारा विरचित 'मूकमाटी' के सम्बन्ध में कुछ कहें, इसके पूर्व हम आचार्य श्री के उस काव्यात्मक अवदान की संक्षेप में चर्चा करेंगे जिसके कारण 'मूकमाटी' की रचना संभव हो सकी। फिर आचार्य श्री की 'मूकमाटी' ही एक ऐसी अनुपम कृति है जो उनकी अक्षयकीर्ति को युगों-युगों तक अक्षुण्ण बनाये रखने में समर्थ होगी। दूसरे शब्दों में हम यह भी कह सकते हैं कि 'मूकमाटी' एक ऐसी कालजयी कृति है, जिसे समय की पर्तें उसके जनकल्याणकारी वैभव को कभी भी धूमिल नहीं बना सकेंगी।

कहा गया है कि कविता मन की अतल गहराइयों से उठती हुई अनुभूतियों की तरंग है। यही तंरगें जब शब्दों के माध्यम से व्यक्त होकर जन-जन के हृदय को अनुरंजित करती हुई अतीन्द्रिय आनंद की अनुभूति कराती है तो कविता धन्य हो जाती है। कविता को यह गौरव 'मूकमाटी' के माध्यम से आचार्य श्री ने नाना रूपों में प्रदान किया है।

अनेक कवियों ने कविता का जन्म वेदना और पीड़ा से माना है। 'पंत' ने भी कहा है- ''वियोगी होगा पहला कवि, आह! से निकला होगा गान। उमड़कर आँखों से चुपचाप, वहीं होगी कविता अनजान।''..... यहाँ पर भी कवि के मन में सांसारिक भोंगों में लिप्त मानव के अंतहीन दु:खों के प्रति वेदना की हूक उठी होगी और करुणा के बादल कवि के अंतस्लोक में घुमड़ने लगे होंगे। आहों की बिजलियाँ चमकी होंगी और अंतर का कोना-कोना पर्वत की पीर की तरह पिघल कर अनजान झरने की तरह कविता के रूप में प्रवाहित हुआ होगा, तभी तो कवि के मन में 'नर्मदा के नरम कंकर' को शंकर बनाने की बात मन में आयी होगी। 'तोता' को रोता हुआ देखकर कवि का मन करूणा से भर उठा होगा, यह सोचकर की आँसुओं के जल से अंतर की मलिनता जाती रहती है और मन प्रभु भक्ति के लिए निर्मल हो जाता है। वह (कवि) प्रभु के गुणों का गान करता हुआ चेतना की गहराईयों में उतरा होगा, जहाँ केवल समर्पण की सच्ची साधना के मर्म की अनुभूति हुई होगी। परमात्मा की सत्ता में अपने अस्तित्व के विसर्जन का भाव जाग्रत हुआ होगा। ऐसी स्थिति में 'डूब जाने' की आशंका जाती रही होगी। केवल प्रभु की भक्ति रूपी जल में 'डुबकी लगाने' का भाव ही शेष रहा होगा। यहाँ आकर कवि भक्ति के सागर में अवगाहन करता है और इस संसार में भटक रहे प्राणियों को भी आनंद के सागर में डुबकी लगाने की सलाह देता है। सृष्टि के कण-कण में सुख, शांति और समृद्धि फैलने लगे। सृष्टि से सारे संताप दूर हो जायें और कण-कण में मुस्कान विखर जाये। जड़ पदार्थ भी चेतन हो उठे। माटी महकने लगे। उसमें भी स्पंदन शुरू हो जाय, तो मानो कवि का प्रयोजन सिद्धि को प्राप्त कर ले। और फिर ऐसा ही हुआ- 'मूकमाटी' के रूप में। आचार्य श्री की कवि कलम के स्पर्श से माटी बोल उठी। 'मूकमाटी' तो बोली ही, लगता है असंख्य हृदयों में धर्म की अनुगूंज के स्वर गुंजायमान होने लगे। 'मूकमाटी' ने साहित्य-जगत को आंदोलित कर दिया। एक ऐसी हलचल पैदा कर दी कि विद्वान, कवि, आलोचक और साहित्य प्रेमी इस 'मूकमाटी' के स्पंदन को सुनने और समझने के लिए लालायित हो उठे। आज यह कृति साहित्य जगत में उस स्थान की अधिकारिणी माने जाने लगी जहाँ कवि प्रसाद की 'कामायनी', दिनकर की 'उर्वशी' और पंत का 'लोकायतन' हुआ था। इसलिए कि महाकाव्य की सम्पूर्ण विशेषताओं के साथ-साथ इस कृति में आधुनिक युग की उन मूलभूत समस्याओं का उचित समाधान किया गया है, जो कृति के कालजयी होने के लिए आवश्यक है।

जहाँ तक साहित्य जगत् में किसी रचनाकार की पहचान का प्रश्न है तो हम यही कह सकते हैं कि किसी कवि या साहित्यकार की वे कुछ एक रचनाएँ ही हुआ करतीं हैं जो उसकी पहचान को कायम करती हैं। इस दृष्टि से यदि हम अतीत की ओर झांके तो ज्ञात होगा कि जायसी की पहचान के लिए 'पद्मावत', तुलसी की पहचान के लिए 'रामचरित मानस' केशव की पहचान के लए 'रामचंद्रिका', प्रेमचंद्र की पहचान के लिए 'गोदान', रेणु की पहचान के लिए 'मैला आँचल', प्रसाद की पहचान के लिए

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'कामायनी', निराला की पहचान के लिए 'राम की शक्ति पूजा', दिनकर की पहचान के लिए 'उर्वशी', पंत की पहचान के लिए 'लोकायतन', और इसी प्रकार आचार्य श्री की साहित्य जगत में पहचान 'मूकमाटी' के द्वारा कायम हुई। 'मूकमाटी' आधुनिक काल का ऐसा महाकाव्य है जिसने जनमानस को आंदोलित किया है। 'मूकमाटी' आने वाले समय में भारतीय संस्कृति को अक्षुण्य बनाये रखने के लिए एक थाती का कार्य करेगी। यह कृति कवि, मनीषी, संत और आध्यात्म के क्षेत्र में शिखर ऊँचाईयों को प्राप्त कर चुके उस महान् कवि का अनुभूतिगम्य निचोड़ है जो कि साधना के उच्चतम सोपानों को प्राप्त करने के पश्चात प्राप्त होता है। 'मूकमाटी' के अनुपम उपहार को साहित्य जगत् जिस कृतज्ञ भाव से ले रहा है वह नि:संदेह अत्यंत शुभ संकेत है।

वास्तव में देखा जाय तो 'मूकमाटी' केवल एक काव्य कृति ही नहीं, वरन् एक ऐसा महाकाव्य है जिसमें भक्ति, ज्ञान और कविता की त्रिवेणी का संगम सबको पावन बना देता है। आचार्य श्री ने स्वयं इस महाकाव्य के उद्देश्य पर प्रकाश डालते हुए लिखा है- ''जिसने वर्ण, जाति, कुल आदि व्यवस्था विधान को नकारा नहीं है, परन्तु जन्म के बाद आचरण के अनुरूप उसमें उच्च-नीचता रूप परिवर्तन को स्वीकारा है। इसलिए संकर दोष से बचने के साथ-साथ वर्ण लाभ को मानव जीवन का औदार्य व साफल्य माना है। जिसने शुद्ध सात्विक भावों से संबंधित जीवन को धर्म कहा है। जिसका प्रयोजन सामाजिक, शैक्षणिक, राजनैतिक और धार्मिक क्षेत्रों में प्रविष्ट हुई कुरीतियों को निर्मूल करना और युग को शुभ संस्कारों से संस्कारित कर भोग से योग की ओर मोड़कर वीतराग श्रमण-संस्कृति को जीवित रखना है।''

आचार्य श्री का यह महाकाव्य जैन दर्शन के धरातल पर समकालीन परिप्रेक्ष्य में काव्य शास्त्र की एक नवीन भाव-भूमि को प्रस्तुत करता है। 'माटी' को आधार बनाकर 'मुक्त छंद' में भाव, भाषा और शैली की दृष्टि से आचार्य श्री का यह अनुपम और स्तुत्य प्रयास है जिसमें कवि की दृष्टि पतित से पावन बनाने की ओर दिखाई देती है। आचार्य श्री का यह महाकाव्य मानव सभ्यता के संघर्ष और सांस्कृतिक विकास का दर्पण है। यह कृति मानवता को असत्य से सत्य की ओर, हिंसा से अहिंसा की ओर, अशांति से शांति की ओर और बाह्य से अन्तर की ओर ले जाने वाली ऐसी अन्यतम रचना है जो एक साथ अनेक प्रसंगों को लेकर चली है। जिस तरह से बट-बीज से बट का विशाल वृक्ष बनता है ठीक उसी तरह से नर भी नारायण बनता है और यह सच्ची साधना उपासना से ही सम्भव है। इसी लक्ष्य को लेकर महाकवि ने इस महत् कार्य को काव्य रूप में संस्कारित किया है, जिसका औदात्य भाव हम 'मूकमाटी' की निम्न पंक्तियों में देख सकते हैं-

''यहाँ ..... सबका सदा
जीवन बने मंगलमय
छा जावे सुख छाँव,
सबके सब टलें
अमंगल भाव,
सबकी जीवन-लता
हरित-भरित विहंसित हो
गुण के फूल विलसित हों
नाशा की आशा मिटे
आमूल महक उठे
..... बस।''

मूकमाटी में (का पूरा कथानक) माटी के उद्धार की कथा काव्य-रूप में है। यहाँ माटी आत्मा की प्रतीक है, जो भव-भटकन से मुक्ति के लिए सच्चे गुरू की शरण में स्वयं साधनालीन हो सुख-शांति के पथ पर चल कर स्वयं परमात्मा बनती है। अर्थात् माटी अपने संकर दोषों से विरत होकर मंगल-कलश के रूप में ढ़लती है। इसके पहले यह नीति नियमों की रीति से गुजरकर अग्नि परीक्षा देती है-

''मेरे दोषों का जलाना ही
मुझे जिलाना है
स्व पर दोषों को जलाना
परम धर्म माना है संतों ने।''

अग्नि परीक्षा के बाद पका हुआ कुम्भ अपनी महिमा के यश में अपने आप को नहीं भूलता है। वह तो माँ धरती, धृति-धरणी, भूमा का ही बना ही रहना चाहता है जो इस बात का द्योतक है कि हम कितने ही वैभवशाली बनें, मगर अपनी संस्कृति, अपनी सभ्यता और माटी को न भूलें-

''धरती की थी, रहेगी माटी यह
किन्तु
पहिले धरती की गोद में थी
आज धरती की छाती पर है
कुंभ के परिवेश में।''

यहाँ पर मूकमाटी महाकाव्य की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि निर्जीव प्रतीक भी सजीव पात्र बनकर हमारे सामने ऐसे प्रस्तुत होते हैं जैसे कि साक्षात् वार्तालाप हो रहा हो। यहाँ पर महाकवि ने स्वर्णकलश को आतंकवाद और पूंजीवाद का प्रतीक माना है, जबकि कुंभ कलश तो दीपक के समान पथ निर्देशन करने वाला है-

''हे स्वर्ण कलश
तुम तो हो मशाल के समान
कलुषित आशयशाली
और
माटी का कुंभ है
पथ-प्रदर्शक दीप-समान
तामश-नाशी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

साहस सहंस स्वभावी।''

'मूकमाटी' का कवि 'संत' और 'साधक' होते हुए जनवादी है। कवि ने सामाजिक अव्यवस्थाओं का यथार्थ संकेत करने के साथ-साथ उनका आदर्श परक समाधान भी सहज रूप में प्रस्तुत किया है-

''अब धन संग्रह नहीं
जन संग्रह करो
.....
बाहुबल मिला है तुम्हें
करो पुरूषार्थ सही
पुरूष की पहचान करो सही,
परिश्रम के बिना तुम
नवनीत का गोला निगलो भले ही,
कभी पचेगा नहीं वह
प्रत्युत जीवन को खतरा है।''

मूकमाटी में समकालीन राजनीति, राजनैतिक दलों, न्याय-व्यवस्था, भाग्य, पुरूषार्थ, नियति, काल, संस्कार, मोह, स्वप्न कला, जीव, अध्यात्म, दर्शन, धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष आदि की व्याख्या सामयिक संदर्भों में की गई है। यहाँ तक की कवि ने समकालीन समय में बढ़ते हुए आतंकवाद पर अपनी गहरी चिंता व्यक्त की है-

''जब तक जीवित है आतंकवाद
शांति का श्वास नहीं ले सकती
धरती यह, ये आँखे अब
आतंकवाद को देख नहीं सकती
ये कान अब
आतंक का नाम नहीं सुन सकते
यह जीवन की कृत संकल्पित है कि
उसका रहे या इसका
यहाँ अस्तित्व एक का रहेगा।''

हम देखते हैं कि आज यह सम्पूर्ण सृष्टि अनेक संकटों के दौर से गुजर रही है। जिसमें विश्वास का संकट सबसे बड़ा संकट हे। अराजकताओं की जननी एक प्रकार से अविश्वास ही है। आचार्य श्री ने 'विश्वासभाव' को हृदय में भरने के लिए प्रेरित किया है-

''क्षेत्र की नहीं
आचरण की दृष्टि से
.....
शब्दों पर विश्वास लाओ,
हाँ। हाँ।
विश्वास को अनुभूति मिलेगी
मगर
मार्ग में नहीं, मंजिल पर।''

इस तरह हम देखते हैं कि आचार्य श्री की यह कृति अनेक दृष्टियों से महत्वपूर्ण है। समकालीन समय में जीवन में उत्पन्न हो रही नानाविध समस्याओं का समाधान कवि ने जिस सरलता से इस कृति में किया है वह अपने आप में एकदम सामयिक और सार्थक है। दूसरी ओर इसमें समकालीन समय के जिन शाश्वत मूल्यों के संकट को उठाकर उनका समाधान किया गया है वह भी एकदम सामयिक है। आज हम देखते हैं कि चारों ओर जीवन-मूल्यों का जिस तीव्रता के साथ ह्रास हो रहा है उसके रोकने के लिए आचार्य श्री की यह कृति अपने अनूठे उपायों का अनुक्रम करती है। मूकमाटी पाश्चात्य सभ्यता के कारण पनप रहे भौतिकवाद को रोकने का एक सशक्त माध्यम भी है, जो इस बात की ओर संकेत करती है कि जीवन का सार भोग में नहीं योग में हैं, आसक्ति में नहीं विरक्ति में है, विराधन में नहीं आराधना में है और यही कारण है कि मूकमाटी साहित्य जगत् में कालजयी होने की सशक्त दावेदार रचना बन गई है।

आचार्य श्री की 'मूकमाटी' आधुनिक हिन्दी कविता के क्षेत्र में जिन बिंदुओं को लेकर उपस्थित हुई है, उसने जीवन में हताशा, पराजय और कुण्ठा के स्थान पर जिस आशा, पुरूषार्थ और स्थाई मूल्यों का संचार किया। वह अपने आप में अन्यतम ही माना जायेगा। 'मूकमाटी' हमें आदर्शवादी समाज की संरचना की दृष्टि देती है, सदाचरण की शिक्षा देती है और साथ ही साथ एक ऐसी जीवन दृष्टि भी प्रदान करती है जिससे व्यक्ति साधक की श्रेणी में पहुँच जाता है। ''आधुनिकता की परम्परा से हटकर मूकमाटी महाकाव्य ने सामुदायिक चेतना की पृष्ठ भूमि में आध्यात्मिक अभ्युत्थान को जिस रूप में उन्मेषित किया है वह वास्तव में बेजोड़ है।'' इस रूप में 'मूकमाटी' नई कविता का एक सशक्त हस्ताक्षर है।

कुल मिलाकर मूकमाटी के विषय में इतना कहना ही पर्याप्त होगा कि-

1. मूकमाटी आधुनिक युग का एक ऐसा महाकाव्य है जिसमें सामयिक समस्याओं का समाधान अत्यंत सरलता के साथ किया गया है।

2. विज्ञान के इस विनाशकारी युग में इस कृति के माध्यम से ऐसे सूत्रों का सूत्रपात हुआ है जिसे अंगीकार कर इस विश्वव्यापी विनाश को रोका जा सकता है। विश्व शांति स्थापित करने में यह कृति मूलमंत्र का काम करेगी।

3. मूकमाटी को पढ़ने के उपरांत विकार युक्त हृदय भी निर्मल बन जाता है। ऐसी स्थिति में भौतिकता के कीचड़ में फंसी यह सृष्टि इस कृति के द्वारा अपना आत्म कल्याण कर सकती है।

4. मूकमाटी के माध्यम से आचार्य श्री ने सत्यम्, शिवम् ओर सुन्दरम् की विराट् अभिव्यक्ति के मुक्ति द्वार खोलने में जिस कलात्मकता का परिचय दिया है उससे सरल हृदयों में, धर्म, दर्शन, कर्म, संस्कृति और आध्यात्म के पावन पंचामृत की

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्वाभाविकता की सहज अनुभूति होने लगती है।

5. इस धरित्री के वे 'संत' महान् हैं जो अपनी रचना धर्मिता के द्वारा इस सांसारिक जगत् के समस्त संतापों से मुक्त करने के लिए भगीरथ प्रयत्न कर रहे हैं। इस दृष्टि से 'मूकमाटी' के द्वारा जिनवाणी के प्रसाद को यदि हम सब सम्पूर्ण भारत वर्ष में बाँटने के लिए कृत संकल्प हो जायें तो इस सृष्टि का कल्याण होने में देर नहीं लगेगी।

6. मूकमाटी के माध्यम से 'ज्ञान जागरण' का ऐसा संदेश द्वार-द्वार तक पहुँचना चाहिए जिससे कि संसार के दिग्भ्रमित प्राणी सही दिशा प्राप्त कर सकें। यदि ऐसा हुआ तो नि:संदेह सदियाँ आचार्य श्री के इस अवदान को कभी विस्मृत नहीं कर पायेंगी।

7. जब एक कुशल रचनाकार जीवन और जगत की मार्मिक संवेदनाओं की अतल गहराईयों में उतर जाता है तब उसकी रचना फिर किसी 'कोश' का अनुशरण नहीं करती। वरन् कोशकारों के लिए एक नई शब्दावली प्रदान करती है। मूकमाटी में आचार्य श्री की रचनात्मक अतलता को देखकर ऐसा लगता है कि वे विपुल और विस्मयकारी शब्द-भण्डार के स्वामी हैं और यही वजह है कि उनके अक्षर-अक्षर में शब्दत्व की अनुगूंज सुनाई पड़ती है। उन्होंने शब्दों को नये अर्थ, नये परिवेश के रंग-विरंगे परिधान पहनाये हैं। इसलिए उन्हें 'शब्दों का जादूगर' कहा गया है। मूकमाटी मात्र एक कृति ही नहीं सम्पूर्ण सृष्टि का वह सारतत्व है, जिसे आज तक कोई साहित्यकार किसी एक रचना में संयोजित करने का दुर्लभ प्रयास नहीं कर सका और न कर पायेगा।

संक्षेप में बस इतना ही कहना चाहूँगा कि 'मूकमाटी' एक ऐसी रचना है जिसने साहित्य जगत् की मनीषा को झंकृत करने के साथ-साथ इस बात पर विचार करने के लिए साहित्यकारों को विवश किया है कि आज तक किसी साहित्यकार की किसी कृति पर इतना विचार-विमर्श नहीं हुआ जितना कि 'मूकमाटी' पर । सच तो यह है कि 'मूकमाटी' ने लोगों को इतना अधिक बोलने पर विवश किया है कि जिसका कोई अंत नहीं। इसीलिए वर्तमान समीक्षकों के द्वारा 800 से अधिक 'मूकमाटी' पर समीक्षाएँ लिखे जाने के बावजूद भी विद्वान यही कहते हैं 'न इति, न इति' अर्थात् अभी भी काफी कुछ कहना शेष है। बस।

प्रोफेसर एवं अध्यक्ष - हिन्दी विभाग
शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय
टीकमगढ़ (म.प्र.)

बोधकथा

सौदा न पटा

किसी गांव में एक पुराने सेठ रहते थे। वह एक बार कहीं बकरियों की खोज में निकले। किसीने बताया कि अमुक गाँव के अमुक आदमी के पास बकरियाँ हैं। वहीं वह चल दिए। जिसके पास वे बकरियाँ थीं, वह मामूली आदमी था। वह सेठ को नहीं पहचानता था। इसलिए उसने उनकी विशेष आवभगत नहीं की। उसने सोचा, यहाँ बहुत से व्यापारी आते हैं। होगा कोई ऐसा ही । इसलिए उसने उनसे तम्बाखू पीने की भी न पूछी। सेठजी को बहुत बुरा लगा, पर दूसरे के घर पर क्या कहते ? उन्होंने बकरियाँ दिखाने को कहा। बकरियोंवाला उनको गोठ में ले गया। सेठ ने बकरियाँ देखीं और कहा, 'तो कहो मोल।' बकरी वाले ने कहा, "मोल तो हो ही जायगा। लेकिन ध्यान रखना कि मैं उधार नहीं दूगा।" सेठ को बुरा लगा। उन्होंने सोचा, यह आदमी मुझे क्या समझता है! उनके हाथ में सोने की अंगूठी थी। वह बता देना चाहते थे कि वह सेठ हैं, पर मुंह से कहना उन्होंने ठीक न समझा। इसलिए उन्होंने उस उंगली से, जिसमें अंगूठी थी, संकेत किया, "इस बकरी का मोल बता।" बकरीवाले ने अंगूठी देख ली और जान गया कि ऐसा संकेत इसने मुझे अंगूठी दिखाने के लिए ही किया है। उसने मन ही मन कहा कि बड़ी शान दिखाता है अंगूठी की! उसके दाँतों पर सोने की फूली थी। उसने इस तरह कहने को मुंह खोला कि दांत दिखाई दें और कहा, "पच्चीस रुपया।"

सेठ समझ गए कि दांत की फूली दिखाना उनकी अंगूठी दिखाने का जवाब था। वहाँ पर एक दूसरा आदमी भी बैठा था। उसने सोचा, यह तो कोई अंगूठी दिखा रहा है, कोई फूली, मैं क्या इनसे कम हूँ! उसके कानों में बालियां थीं। जैसे ही बकरी वाले ने बकरी की कीमत पच्चीस रुपया बताई, उसने सिर हिलाया, "नहीं ज्यादा कह रहे हो।" और उसकी बालियां हिलती हुई दीखने लगीं।

बस, फिर बकरी का मोल कहाँ होना था! वे अपनी-अपनी शान दिखाने लगे। उनका सौदा क्यों कर पटता!

लघु लोक कथाएँ : गोविन्द चातक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ज़रा सोचिये!

पद्मचन्द शास्त्री

क्या जैन जिन्दा रह सकेगा ?

जैसे चन्द लोग इकट्ठे होते हैं और आकाश गुंजाने को जोर से नारा लगाते हैं- 'जैन धर्म की जय।' नारे से आकाश तो गूंजता है, पर, क्षण भर में वह गूंज कहाँ विलीन हो जाती है ? इसे सोचिए कहीं वह अस्तित्व रखते हुए भी अरूपी आकाश में तो नहीं समा जाती। इसी प्रकार आज जैन को ढूंढना भी मुश्किल है, वह भी चूर-चूर होकर बिखर चुका है ? शायद कहीं वह भी तो अरूपी आकाश में नहीं समा गया ? देखिए, जरा गौर से-यदि ज्ञान-दीपक लेकर ढूंढ़े तो शायद मिल जाय!

आप किसी मंदिर में जाइए वहाँ आप समवसरण के कीमती से कीमती वैभव को देख सकेंगे, पाषाण-निर्मित प्रतिबिम्बों को देख सकेंगे- वे बिम्ब चाँदी, सोने, हीरे और पन्नों के भी हो सकते हैं, आप आसानी से देख सकेंगे। पर जैन आपको अपनी आँखों या भावों से कदाचित् ही दिखें।

ऐसे ही किसी त्यागी समाज में जाकर देखिए वहाँ आपको लाल, गेरुआ, पीत, श्वेत या दिगम्बर चोला तो दिखेगा, पर, जिसे आप खोज रहे हैं वह 'जैन' न मिलेगा। ऐसे ही किसी पण्डित के पास जाइए उसे सुनिए : आपको सिद्धान्त और आगम की लम्बी चौड़ी व्याख्याएँ मिलेंगी, क्रिया-काण्ड मिलेगा पर, 'जैन' के दर्शन वहाँ भी मुश्किल से हो सकेंगे। धन-वैभव में तो जैन के मिलने का प्रश्न ही नहीं-जहाँ लोग आज खोज़ते हैं।

आप पूछेंगे भला, वह जैन क्या है, जिसे देखने की आप बात कर रहे हैं ? आखिर, उस जैन को कहाँ देखा जाय ? तो सुनिए-

'जैन' आत्मा का निर्मल, स्वाभाविक रूप है, वह सरल आत्माओं के भावों और आचार विचारों से मुखरित होता है। जहाँ मलीनता, बनावट और दिखावा न हो वहाँ झलकता है। आप देखें ये जो कई श्रावक हैं, पण्डित हैं, त्यागी और नेता हैं, इनमें कितने, किस अंश में मलीनता, बनावट और दिखावे से कितनी दूर हैं ? जो इनमें जैन हो। क्या कहें ? आज तो त्याग की परिभाषा भी बदली जैसी दिखती है। त्याग तो जैन बनने का सही मार्ग है और वह मार्ग अन्तरंग व बहिरंग दोनों प्रकार के परिग्रहों को कृश करने और परिग्रहों के अभाव में मिलता है। अर्थात् परिग्रह की जिस स्थिति को छोड़कर व्यक्ति घर से चला हो उस स्थिति की अपेक्षा परिग्रह में हीनता होते जाना त्याग की सच्ची पहिचान है। पर, आज तो परिस्थिति अधिकांश ऐसी है कि जो पुरुष दीक्षा-नियम से पूर्व किसी झोपड़ी, साधारण से सुविधारहित कच्चे-पक्के घर में रहता था वह त्यागी नामकरण होने के बाद सुन्दर,स्वच्छ, सुविधायुक्त मकानों, कोठियों, बंगलों और यहाँ तक कि वह बकिंघम पैलेस जैसे महलों में रहने के स्वप्न देखता और वैसे प्रयत्न करता है। जिसे दीक्षा के पूर्व ख्याति, पूजा-प्रतिष्ठा की चाह न थी, वह उत्सवों, कार्यक्रमों आदि के बहाने बड़े-बड़े पोस्टरों में बड़ी-बड़ी पदवियों सहित अपने नाम फोटो और वैसी किताबें छपाना चाहता-छपाता है। जिसे दीक्षा पूर्व लोग जानते भी न थे- कोने में बैठा रहता हो वह दीक्षा के बाद सिंहासनारूढ़ होकर सभाओं में अपने जयकारे चाहता है। जो घर से सीमित परिवार का मोह त्याग वैराग्य की ओर बढ़ा था वह उपकार के बहाने सीमित की बजाय श्रावक-श्राविका और सेठ-साहूकारों जैसे बड़े परिवारों के फेर में फँस जाता है, उनके वैभव से घिर जाता है। ये सब तो ग्रहण करने के चिन्ह हैं और ग्रहण करने में जैन कहाँ ? जैन तो उत्तरोत्तर त्याग में है, आकिंचन्य में है। हाँ, सच्चे त्यागी होंगे अवश्य-उनको खोजिए, जहाँ वे हों, जाइए और नमन कीजिए, इसमें आपका भी भला है।

श्रावकों की मत पूछिए, वे भी कहाँ, कितने हैं ? होंगे बहुत थोड़े कहीं - किन्हीं आकाश प्रदेशों में, श्रद्धा और विवेकपूर्वक श्रावक की दैनिक षट्क्रियाओं में लीन। वरना, अधिकाँश जन समुदाय तो इस पद से अछूता ही है- रात्रि-भोजी और मकार-सेवी तक। जिन्हें हम श्रावक माने बैठे हैं, तथोचित सर्वोच्च जैसे सम्मान आदि तक दे रहे हैं, शायद कदाचित् उनमें कुछ श्रावक हों, तो दैनिक षट्क्रियाओं की कसौटी पर कस कर उन्हें देखिए। वरना, वर्तमान वातावरण से तो हम यह ही समझ पाए हैं कि इस युग में पैसा ही श्रावक और पैसा ही प्रमुख है- सब उधर ही दौड़ रहे हैं।

पण्डित, 'पण्डा' वाला होता है और 'पण्डा' बुद्धि को कहते हैं - **'पण्डा' बुद्धिर्यस्यसः पण्डितः** अर्थात् जिसमें बुद्धि हो वह पण्डित है। आज कितने नामधारियों में कैसी बुद्धि है, इसे जिनमार्ग की दृष्टि से सोचिए। जब जिनमार्ग विरागरूप है तब वर्तमान पीढ़ी में कितने नामधारी, पं. प्रवर टोडरमल जी, पं. बनारसीदास जी और गुरुवर्य पं. गोपालदास जी बरैया, पं. गणेशप्रसाद वर्णी जैसे सन्मार्ग राही और अल्प सन्तोषी हैं ? जो उक्त परिभाषा में खरे उतरते हों या जो लौकिक लाभों और भयों की सीमा लांघे-बिना किसी झिझक के सही रूप में जिनवाणी के अनुसर्ता या उपदेष्टा हों ? कडुवा तो लगेगा, पर, आज के त्यागी वर्ग की शिथिलता में कुछ पण्डितों, कुछ सेठों या श्रावकों का कुछ हाथ न हो-ऐसा सर्वथा नहीं है। कई लोग हाँ में हाँ करके (भी) मार्ग बिगाड़ने में सहयोगी हों तब भी सन्देह नहीं। कुछ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पंडितों की अहं पण्डा (बुद्धि) के कारण, उनके सहयोग से मूल आगम रूप भी बदलाव पर हो तो भी सन्देह नहीं। हम आगम के पक्षपाती हैं। हम नहीं चाहते कि कोई अपनी बुद्धि से आगमों में परिवर्तन लाए। हम तो पूर्वाचार्यों की चरण-रज -तुल्य भी नहीं, जो उनकी भाषा में किन्हीं बहानों से परिवर्तन लाएँ- आचार्यों ने किस शब्द को किस भाव में कहाँ, किस रूप में रखा है इसे वे ही जानें- इस विषय को आचार्यों की स्व-हस्तलिखित प्रतियों की उपलब्धि पर सोचा जा सकता है, पहिले नहीं। जैसा हो, विचारें।

अब रह गये नेता। सो नेताओं की क्या कहें ? वे हमारे भी नेता हैं। गुस्ताखी माफ हो, इसमें हमारा वश नहीं। नेता शब्द ही ऐसा बहुमुखी है जो चाहे जिधर मोड़ा जा सकता है- नेता अच्छों के भी हो सकते हैं और गिरों के भी, धर्मात्माओं के भी हो सकते हैं। पर, यहाँ 'मोक्ष मार्गस्य नेतारं' की नहीं, तो कम से कम जैन समाज और जैन धर्म के नेताओं की बात तो कर ही रहे हैं कि वे (यदि ऐसा करते हों तो) केवल नाम धराने के उद्देश्य से दिखावा न कर जनता को धर्म के मार्ग में सही रूप में ले चलें और स्वयं भी तदनुरूप सही आचरण करें। जिससे जैन धर्म टिका रह सके। यदि ऐसा होता है तो हम कह सकेंगे- हाँ, जैन जिन्दा रह सकेगा। असलियत क्या है ? जरा सोचिए!

सिद्धान्त समन्वय सार

ब्र. शान्ति कुमार जैन

परम आराध्य देव श्री नेमीनाथ जी तीर्थंकर भगवान् की दीक्षा में वैराग्य के विषय में कुछ नवीन चिन्तन है। विद्वत् वर्ग निष्पक्ष विचार करें। अच्छी लगे तो ग्रहण करें अन्यथा छोड़ देवें। मेरा कोई हठाग्रह नहीं है।

तृण भक्षी शाकाहारी अनेक प्रकार के पशुओं को देख कर भगवान् के मन में जिज्ञासा का होना स्वाभाविक है। विवाहोत्सव में कन्या पक्ष में अतिथि मेहमान अनेक आते हैं। बराती भी अनेक आये। आने वाले वाहनों पर आए तो वाहनों के लिए अवस्थान का स्थान भी मार्ग के किनारे पर ही बनाया जाता है। शाकाहारी पशुओं को ही वाहनों के रुप में प्रयोग किया जाता है।

वे सारे पशु अनेक जाति के हो सकते हैं। जिसके पास जैसा जो वाहन रहा तो लेकर आयेगा। अब एक स्थान पर अनेक तरह के बड़ी संख्या में पशुओं के एकत्रित होने पर उनसे निकली हुई आवाजें, कोलाहल, आपस में लड़ना-भिड़ना तो होते ही रहता है।

उसी रास्ते से नेमी कुमार जी का रथ भी आया तो उन पशुओं को देखकर उनके मन में करुणा-दया का उद्रेक हुआ। पशुगति के दुःखों का स्मरण हुआ तो वैराग्य आ गया।

उनके स्वयं के पास अवधिज्ञान था पर उसका प्रयोग भी नहीं किया, आवश्यकता भी नहीं थी। तो फिर सारथी को पूछना एवं सारथी के द्वारा दिया गया उत्तर असंगत सा लगता है। मांसाहारी अतिथियों को शाकाहारी मांस खिलावे तदर्थ तृणभोजी पशुओं की हत्या करने की व्यवस्था करें, यह बात गले नहीं उतरती। राजुल आर्यिका बनी थी, तो उनका पिता ऐसा कार्य करे, यह भी ठीक नहीं लगता। ऐसा तो आज भी सद् गृहस्थ श्रावक के घर विवाहादि आयोजनों में नहीं होता। किसी की दुरभिसंधी से प्रेरित होकर एक सामान्य सारथी राजकुमार नेम कुँवर के समक्ष मिथ्याभाषण करे, यह भी उचित नहीं लगता। आगंतुक सभी वाहनों के पशु वहाँ रखे ही जा रहे थे, यह स्पष्ट दिख रहा था। मांस खिलाने वाले राजा की कन्या से विवाह सम्बन्ध को स्वीकार ही नहीं किया जा सकता है।

नेमीनाथ के साथ शक्ति परीक्षण में कृष्ण जी का पराजित होने के पश्चात् विवाह के लिए उन्हें तैयार करने का कार्य तो वसन्त की वन क्रिड़ाओं में अपनी रानियों के द्वारा करा ही दिया गया था। उस प्रकरण में भी जलक्रीड़ा के अनन्तर गीले कपड़ों को निचोड़ने के लिए कृष्ण जी की प्रियतमा रानी जाम्बुवती के प्रति संकेत करना भी अनावश्यक लगता है। कारण गृहस्थावस्था में तो तीर्थंकर देवों के द्वारा लाये गए वस्त्राभूषण पहनते हैं एवं आहारादि ग्रहण करते हैं तद्पि राजा महाराजाओं के पास इन कार्यों के लिए दास दासियाँ अनेक होती हैं। नेमीनाथ के द्वारा कृष्ण जी की नागशय्या पर चढ़ कर शंखनाद करने के प्रकरण के अवतरण के लिए यह प्रसंग असंगत जैसा लगता है। भाभियों के द्वारा छेड़छाड़ तो देवर के प्रति होती ही रहती है। अन्य किसी बात पर नेमीनाथ जी को क्रोध आना सम्भव हो सकता था।

यह नूतन चिन्तन का अभिप्राय विसंगति को सिद्धान्त के परिप्रेक्ष में समन्वय करना मात्र है। इस सद् प्रयास में कोई भूल हो गई हो तो हम आचार्य महाराज एवं विद्वत् वर्ग से क्षमा प्रार्थी हैं।

उत्तरपुराण में यही प्रसंग भिन्न रूप से है। कृष्ण जी ने हिरणों को एकत्रित कराकर एक स्थान पर रखवा दिया था। क्षेत्र रक्षक को कह दिया था कि नेमिकुमार के पूछने पर मांस भोजन की व्यवस्था के लिए रखा गया है, ऐसा कह देवें। वैसा ही ज्ञात होने पर भी नेमीकुमार जी ने अपने ज्ञान से यह जान लिया था कि यह सब कृष्ण जी की मायाचारी एवं कपट नीति का ही कार्य है, जो कि राज्य प्राप्ति के लिए मुझे वैराग्य भावना की उपलब्धी के लिए किया गया है। विवाह किए बिना ही वे अपने स्थान पर लौट गये एवं वैराग्य भावना का चिन्तवन करने लगे, तो लोकान्तिक आदि देवों ने आकर दीक्षा महोत्सव, तप कल्याणक सम्पन्न किया था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सिद्ध तीर्थ कुण्डलपुर

कैलाश मड़बैया

बुन्देलखण्ड के ''बड़े बाबा'' नाम से देश भर में ख्यात जैन तीर्थ कुण्डलपुर वर्तमान मध्यप्रदेश के दमोह जिले में अवस्थित है। मध्य रेलवे के बीना जंक्शन से कटनी की ओर जाने वाली रेलगाड़ी से दमोह उतरकर मात्र 40 किलो मीटर पक्के मार्ग से ग्राम पटेरा के निकट ही स्थित इस जैन तीर्थ पर पहुँचा जा सकता है। जबलपुर से बस द्वारा भी पहुँचना आसान है। वस्तुतः धार्मिक और पुरातात्विक तीर्थ के साथ यह पर्यटन योग्य भी रमणीक स्थल है। जहाँ सभी आधुनिक सुविधाएँ प्रायः उपलब्ध हैं।

कुण्डल के आकार की गोलाकार पर्वत श्रृंखला होने के कारण कहलाया तीर्थ कुण्डलपुर, प्रकृति की पावन, प्राँजल और सुखद हरीतिमा के बीच विद्यमान है। कुल 63 प्राचीन मंदिरों ने इस तीर्थ को अद्भुत गरिमा प्रदान की है। बीच में जड़े पावन ''वर्धमान सागर'' नाम के सरोवर ने तीर्थ की सुन्दरता को और अधिक आकर्षक बनाया है। ईसवी पूर्व छठवीं सदी में चौबीसवें तीर्थंकर महावीर स्वामी का समवशरण यहाँ आया था और अंतिम केवली भगवान् श्रीधर स्वामी की निर्वाण भूमि होने से यह सिद्ध तीर्थ के रूप में मान्य है। जैसा कि ''बड़े बाबा'' के सामने स्थित चरण चिन्ह के सामने ही अंकित है- ''कुण्डल गिरौ श्री श्रीधर स्वामी'' इसकी पुष्टि प्राकृत ग्रन्थ ''श्री तिलोयपण्णति'' से होती है।

पुरातत्व

मूल पुरातत्त्व तो छठवीं शताब्दी का प्रतीत होता है परंतु निकट स्थित ''बर्रट'' नाम के गांव को श्री कृष्ण के तत्कालीन विराट नगर काल से जोड़ा जाता है। यहाँ अनेक प्राचीन मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं और अभी भी शिल्पावशेष विद्यमान हैं। कुण्डलपुर में अवसर-अवसर पर अनेक जीर्णोद्धार हुये हैं परंतु विगत 300-400 वर्षों में ही अधिकांश निर्माण किये गये हैं। वर्तमान वास्तुशिल्प मराठा कालीन ही अनुमानित है।

यहाँ उपलब्ध दो मठ पुरातत्व के महत्वपूर्ण प्रमाण हैं जिनमें एक ब्रह्म मठ अभी भी शासन के पुरातत्व विभाग द्वारा संरक्षित किया गया है और दूसरा रूक्मणी मठ लगभग समाप्त प्राय है। जहाँ धरणेन्द्र पद्मावती को एक वृक्ष के नीचे दर्शाये जाने वाला एक महत्वपूर्ण शिलाखण्ड अभी भी विद्यमान है। इस वृक्ष के ऊपर तीर्थंकर पार्श्वनाथ का अंकन है।

इतिहास

मूर्ति रचना की दृष्टि से पुरातत्वविदों द्वारा कुण्डलपुर का शिल्प छटी-आठवीं सदी का माना जाता है। यह उत्तर गुप्तकाल के बाद का निर्माण होना चाहिए। हाँलाकि मूर्ति लेख से केवल 12 वीं सदी की एक प्रतिमा का प्रमाण मिलता है। सन् 1126 की श्री मनसुखजी द्वारा कराई गई प्रतिष्ठा के बाद केवल 1532 का एक प्रतिमा लेख उपलब्ध होता है, शेष प्रतिमाएँ उसके बाद की कालावधि की हैं।

भट्टारकों के भट्टासीन होने के लेख भी प्रमाण स्वरूप उपलब्ध हैं। तथा सन् 1742 में श्री महाचन्द्र भट्टारक और सत्रहवीं सदी में श्री सुरेन्द्र कीर्ति स्वामी भट्टारक ने कुण्डलपुर का जीर्णोद्धार कराया और अपनी साधना का स्थल बनाया था। इसी परम्परा में सुचन्द्रकीर्ति और ब्र. नेमिसागर ने यहाँ पुनर्निर्माण कराया जिसके लेख भी उपलब्ध हैं।

जैन तीर्थों में कुण्डलपुर जैसे ऐसे विरल ही पुण्य स्थल हैं, जहाँ जैनेतर राजाओं ने अपनी मन्नतें पूरी होने पर जीर्णोद्धार कराया हो। इतिहास साक्षी है कि ''बुन्देल केसरी'' छत्रसाल (जो प्रणामी धर्मानुयायी थे) जब विदेशी मुगल आतताइयों से सब कुछ हार चुके थे तो जंगलों में भटकते भटकते यहाँ ''बड़े बाबा'' से मन्नत मांगने आ पहुँचे। और कहते हैं जब उन्हें बन्देलखण्ड का राज्य पुनः वापस मिल गया तो ''बड़े बाबा'' के प्रति अगाध श्रद्धा से वे विव्हल हो उठे थे। तब महाराजा छत्रसाल ने सत्रहवीं सदी में न केवल बड़े बाबा के मंदिर पर सोने चांदी का घण्टा और चँवर-छत्र चढ़ाया वरन् मंदिर के तालाब का जीर्णोद्धार भी कराया था। यह उल्लेख बुन्देलखण्ड के इतिहासकारों ने तो किया ही है। ''बड़े बाबा'' के मंदिर में स्थित शिलालेख भी यह प्रमाणित करता है-

''श्री महाराजा धिराज्ञः श्री छत्रसालस्य महाराज्ये
सकल सम्पत्संयुप्त प्रजाजनस्य चैत्यालयस्य निर्मापितम्''

छत्रसाल कालीन कुछ बर्तन तो अभी भी सुरक्षित बताये जाते हैं। शिलालेख के अनुसार वि.सं. 1757 की माघ सुदी 15 सोमवार को तत्कालीन पंचकल्याणक सम्पन्न हुआ था, जिसमें महाराज छत्रसाल स्वयं पधारे थे। उसी परम्परा में कुण्डलपुर में आज भी माघ सुदी में इस जनपद का विशाल मेला भरता है।

विशेषाकर्षण

कुण्डलपुर जैन तीर्थ का अर्थ है वहाँ स्थित ''बड़े बाबा'' का प्रमुख रूप से दर्शन करना। 1500 वर्षों से अधिक प्राचीन यह पद्मासन प्रतिमा 3 फुट ऊँचे आसान पर 12 फुट उतुंग, देश में अपने तरह की अद्वितीय रचना है। ऐसा सिद्ध, सौम्य और सुन्दर शिल्प-सृजन देश में अन्यत्र दुर्लभ है। प्रतिमा के सिंहासन में गौमुख यक्ष, देवी चक्रेश्वरी और काँधों तक बिखरे केशों से यह प्रमाणित हो सका कि यह प्रथम जैन तीर्थंकर ऋषभनाथ अर्थात् आदिनाथ स्वामी की ही मूर्ति है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

''चिरं सपस्यतो यस्य जटा मूर्ध्नि बमुस्तरम।
ध्यानाग्नि दुग्ध कर्मेन्ध निर्मद धूम शिखर इव''
(आदि पुराणपर्व। श्लोक 9)

चूंकि बड़े बाबा की मूर्ति में तीर्थंकर की पहचान का कोई चिन्ह नहीं है इसलिये सिंहासन पर बने शेरों, शिखर पर उत्कीर्ण सिंह और महावीर स्वामी के बिहार स्थित जन्म-स्थल कुण्डपुर (कुण्ड ग्राम) से नाम में साम्य होने आदि के कारण, वर्षों तक इन्हें महावीर स्वामी ही माना जाता रहा। परंतु पुरातत्त्वविदों के सूक्ष्म परीक्षण उपरान्त महावीर स्वामी के शासन देवों गजारूढ़ मातंग यक्ष व सिद्धायिका देवी नहीं पाये जाने एवं अन्य सभी ऊपर वर्णित लक्षण आदिनाथ के होने के कारण, अवधारणा स्पष्ट हो सकी। यों भी परम्परा से बड़े बाबा प्रथम तीर्थंकर आदिनाथ को कहा जाता रहा है। हांलाकि अब अधिकांश तीर्थों पर बड़ी मूर्ति को ही बड़े बाबा कहने का प्रचलन चल पड़ा है।

तीर्थ वन्दन

विशाल भूभाग के अधिपत्य वाले इस जैन तीर्थ की वंदना यहाँ स्थित सरोवर में स्नान करके ही प्रारंभ करने की परम्परा है परंतु अब सरोवर को स्वच्छ रखने की दृष्टि से यह प्रतिबंधित है। अपने ठहरने के स्थानों यथा धर्मशाला या विश्राम गृहों से ही नहा-धोकर पहाड़ की वंदना करने भक्तगण निकलते हैं। यहाँ पर्वत की चढ़ाई कठिन न होकर बहुत आसान और उत्साह वर्धक है। सर्वप्रथम सबसे ऊंचे छहघरिया मंदिर के दर्शन से ही वंदना प्रारंभ होती है और ''ससुर-दामाद'' नामक मंदिर आदि के दर्शन पंक्तिबद्ध करते हुये पहाड़ी और तलहटी के प्राकृतिक पर्यावरण का प्राँजल परिवेश देखते ही बनता है। 'वर्धमान सरोवर' में मंदिरों के विशाल बिम्ब तैरते से प्रतीत होते हैं। सूर्य की सुनहरी आभा से यह दृश्य और अधिक लुभावना हो, मन मोहता है। सुबह की मदमस्त हवा, वंदना (दर्शनयात्रा) को और अधिक आनंदित कर स्फूर्तमय बनाती है। ''जयकारा'' बोलते हुए दर्शनार्थी जैसे ही बड़े बाबा के सामने पहुँचता है तो हतप्रभ हो उठता है-

ऐसी मूरत कभी न देखी जैसी आज लखी है,
सचमुच बड़े-बड़े बाबा हैं सूरत बड़ी भली है।

''बड़े बाबा'' के दोनों ओर समान ऊँचाई की तेइसवें तीर्थंकर पार्श्वनाथ की प्रतिमायें कायोत्सर्ग मुद्रा में अवस्थित हैं। भित्तियों पर अन्य प्राचीन प्रतिमायें भी जड़ी हैं। आदिनाथ स्वामी की मूर्ति के ऊपर विद्याधरों की श्रीमाल लिये उड़ती हुई मुद्रा में, हर्षोल्लास व्यक्त करते हुये चमरेन्द्र आदि भी अंकित हैं। लाल बलुआ पत्थर से निर्मित दिव्य मूर्ति का सिंहासन दो हिस्सों को जोड़कर बनाया गया सा लगता है। कहते हैं कभी भूकम्प के आने से ही कदाचित ''बड़े बाबा'' का सिंहासन एक ओर थोड़ा दब गया है। मूर्ति में ऊपर की ओर एक दरार आई दिखती है। विगत वर्ष मुझे जब अपने ज्येष्ठ पुत्र मनीष के संबंध करने के लिये पटेरा जाने पर वर्षों बाद कुण्डलपुर दर्शन का सौभाग्य मिला तो यह जानकर आश्चर्य हुआ कि पुराने मंदिरों को तोड़कर एकदम नया और विशाल जिनालय बनाया जा रहा है। वहाँ कार्यरत इंजीनियर से मैंने अपनी शंका भी व्यक्त की कि ''बड़े बाबा'' की मूर्ति की जगह ही पुराने मंदिर के स्थान पर, नया मंदिर क्यों नहीं बनाया जा रहा है? मूर्ति स्थानांतरण करते समय यदि पहले आई दरार, बढ़ गई और अभूतपूर्व बड़े बाबा की मूर्ति को कोई नुकसान पहुँचे तो क्या होगा? इंजीनियर एवं समाज के लोगों ने बताया कि भूगर्भशास्त्रियों एवं संबंधितों से परामर्श कर लिया गया है, कोई क्षति नहीं होगी।

कारण कि ''बड़े बाबा'' की मूर्ति यहाँ ही स्थाई रूप से निर्मित नहीं की गई थी वरन प्राचीन काल में भी अन्य स्थान से लाकर यहाँ अवस्थित की गई थी। इससे अब निकट के बड़े जिनालय में भी स्थानांतरित की जा सकती है। क्षति का प्रश्न ही नहीं उठता। बुन्देलखण्ड की संस्कृति पर वर्षों से काम करते हुये मुझे ''बुन्देल केसरी'' छत्रसाल के रचे निर्माण को नष्ट होते हुये देखकर आत्मीय पीड़ा हो रही थी पर जब ज्ञात हुआ कि भूकंप से बचाने और भविष्य की सुरक्षा के लिये यह आवश्यक है।

गर्भ गृह को आगत की दृष्टि से व्यापक विस्तारित करने के लिये ही आधुनिकतम मंदिर का निर्माण किया जा रहा है। बड़े बाबा को क्षति भी नहीं होगी और 108 मुनिवर आचार्य श्री विद्यासागर जी का आशीर्वाद प्राप्त हो गया है। तब वह पीड़ा उस माँ के प्रसव पीड़ा जैसी प्रतीत हुई जिससे एक होनहार महान् जीव का नवागमन होता है। हम आप क्या अपने पूर्वजों के बनाये कच्चे मिट्टी के घर मिटाकर बंगले या बहुमंजिला भवन नहीं बनाते हैं? तो फिर भगवान के लिये हमारे पूर्वाग्रह क्यों ? हमारे पूर्वजों के बनाये कच्चे घर, हमारी सांस्कृतिक धरोहर नहीं थे? उनमें रंगोली, नक्काशी, टिकाउपन और कलाकृतियाँ नहीं थी ? जब उसकी जगह नये निर्माणों ने ले ली है तो हमारे आराध्य पीछे क्यों रहें? फिर बड़े बाबा तो बड़े बाबा हैं। अनेक अतिशय उन्होंने दिखाये हैं, प्रासंगिक और आधुनिक परिवर्तन के लिये यह चमत्कार भी दिखायेंगे।

कहते हैं सदियों पहले औरंगजेब ने जब बुतों के विध्वंस की हवश में ''बड़े बाबा'' को नष्ट करने के लिये सेना भेजी थी तब ''जब जब होय धरम की हानि'' के अनुरूप ''बड़े बाबा'' की सिद्धता ने ही रक्षा की और आक्रमणकारियों द्वारा अंगूठे पर प्रथम चोट करते ही दूध की धारा वहाँ वह निकली थी। जब शहँशाह स्वयं भंजन करने आये और मधुमक्खियों का जो प्राकृतिक आक्रमण मुगलों पर हुआ तो आततायियों को प्राणों की भीख मांगकर ही भागना पड़ा था। यदि इस अतिशय पर हमारी आस्था है तो ''बड़े बाबा'' के लिये हमारी चिन्ता करना, नादानी होगी।

तीर्थ की तलहटी के मंदिर भी प्राचीन, विशाल, भव्य और वंदनीय हैं। जल मंदिर में एक चौमुखी (सर्वतोभद्र) प्रतिमा महत्वपूर्ण है जो उल्लेखनीय है। ''बड़े बाबा'' को हमारे अनन्तानन्त नमन और साथ ही सद्प्रयासों के लिये अशेष शुभ मंगलकामनाएँ।

मडबैया सदन, 75, चित्रगुप्त नगर,
कोटरा, भोपाल -3

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चतुर्विध संघ शांति-समृद्धि-साधना पद्धति में सहायक है : वास्तुविज्ञान

जैन सुधीर कासलीवाल

किसी भी कार्य की सिद्धि के लिये द्रव्य, क्षेत्र, काल, भव और भाव इन पांच समवायों की आवश्यकता होती है, इनमें से क्षेत्र को व्यवस्थित करना ही 'वास्तु' कहलाता है। वर्तमान में हीन संहनन एवं साक्षात् तीर्थंकर भगवान् जेसे निमित्तों के अभाव में कमजोर उपादान लड़खड़ा जाता है। संवर, निर्जरा .... साधना मार्ग में उपयोगिता महसूस हुई मोक्षमार्ग के कारण-का-कारण वास्तु-विज्ञान की 'पहला सुख निरोगी काया' 'काया राखे धर्म' 'न धर्मो धार्मिकैर्विना' आदि कुछ सूक्तियाँ मेरे लिये प्रेरणादायी बनीं और लिखने बैठ गया।

श्रमण संस्कृति के अनुयायियों के लिये, धर्मात्माओं के लिये यानि चतुर्विध संघ को दृष्टि में रखकर निष्काम भावनाओं से भरकर वास्तु सम्बन्धी तथ्यात्मक एवं प्रामाणिक सामग्री प्रस्तुत करने का मेरा मन बना। साधकों का स्वास्थ्य, साधना, स्वाध्याय एवं जमकर धर्मप्रभावना हो, स्वयं के आत्मोत्थान का मार्ग प्रशस्त हो तथा समाज हमारे आदर्शों से सम्यग्दर्शन-सम्यग्ज्ञान-सम्यक्चारित्र का पाठ सीखे और स्वयं ''गृहस्थो मोक्ष मार्गस्थो'' के सूत्र पर चलें, ऐसी अन्तःकरण की भावना से प्रेरणा मिली।

अधिकांश जनों की एक ही धारणा है कि कर्मोदय ही सब कुछ है, किन्तु आगम ग्रंथों में कर्मों की उदीरणा, अपकर्षण, संक्रमण जैसी अनेकों दशायें वर्णित हैं यानि मात्र कर्मोदय कहकर हम जीवन के बहुमूल्य एवं स्वर्णिम क्षणों को यूं ही न जाने दें वरन रचनात्मक दिशा में आहूत करें।

जैन सिद्धान्त में आचार्य वीरसेन स्वामी ने वास्तु का उल्लेख करते हुये कहा है- ''थल गया णाम... वत्थु-विज्ज भूमि ... संबंध मण्णं पि सुहासुह - कारणं वण्णेदि अर्थ-स्थल गता, चूलिका वास्तु विद्या और भूमि संबंधी दूसरे शुभ-अशुभ कारणों का वर्णन करती है''

धवला पुस्तक 1, पृष्ठ 114

आईये हम वास्तु विज्ञान से सम्बन्धित कुछ जानकारियाँ हासिल करें-

प्रश्न - संघ के प्रमुख साधक को किस दिशा में दिन एवं रात्रिकालीन स्थान का चयन करना चाहिये और उस कमरे में भी कहाँ बैठें ?

उत्तर - नैऋत्य दिशा में। दक्षिण में बैठें उत्तर की ओर मुंह करके। पश्चिम में बैठें पूर्व की ओर मुंह करके।

प्रश्न - जहाँ संघ रुके वह स्थान नगर की किस दिशा में निर्धारित करना चाहिये ?

उत्तर - नैऋत्य या दक्षिण या पश्चिम दिशाओं में।

प्रश्न - जहाँ संघ रुकता है (वसतिका) उससे शौच एवं लघुशंका का स्थान किस दिशा में होना चाहिये ?

उत्तर - वायव्य या नैऋत्य (पश्चिम के बीच में) की तरफ।

प्रश्न - शौच एवं लघुशंका करते समय साधक का मुंह किस दिशा में होना चाहिये ?

उत्तर - उत्तर या दक्षिण में।

प्रश्न - आहार करते समय साधक का मुंह किस दिशा में होना चाहिये ?

उत्तर - सर्वश्रेष्ठ पूर्व दिशा, उत्तर भी हो सकती है, ध्यान रखें मुख्यद्वार की ओर आहार करते समय पीठ नहीं होनी चाहिये।

प्रश्न - रात्रि विश्राम के समय साधक के पैर किस दिशा में होने चाहिये ?

उत्तर - पूर्व की तरफ पैर हो। उत्तर की तरफ भी किये जा सकते हैं।

प्रश्न - संघ के अस्वस्थ साधक किस स्थान पर रुकें ?

उत्तर - पूर्व, पश्चिम अथवा उत्तर दिशाओं में रुकें, विदिशाओं वाले कमरों में न रुकें।

प्रश्न - प्रवचन व स्वाध्याय करते समय वक्ता का मुंह किस दिशा में हो ?

उत्तर - प्रवचन करते समय उत्तर में या पूर्व में तथा स्वाध्याय करते समय पूर्व की ओर मुंह होना चाहिये।

प्रश्न - आर्यिकाजी, क्षुल्लिकाजी एवं ब्रह्मचारिणी बहनें अशुद्ध अवस्था में किस दिशा वाले कमरे में रहें ?

उत्तर - वायव्य दिशा वाले कमरे में, सोते समय पैर उत्तर दिशा की तरफ हों।

प्रश्न - वस्त्रधारी साधक वस्त्र बदलते एवं धोते समय अपना मुंह किस दिशा में करें ?

उत्तर - पूर्व दिशा में सर्वश्रेष्ठ है, उत्तर में भी मुंह कर सकते हैं किंतु धोते वक्त पूर्व दिशा ही उत्तम है।

प्रश्न - जिस भवन में साधक रुके हों यदि वह तिरछा बना है या दिशा तिरछी पड़ती है तब दिशा का निर्धारण कैसे करें ?

उत्तर - विदिशा वाले भवनों में दिशा का निर्धारण सीधा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ही करें अर्थात् स्वयं तिरछे ना बैठें। ईशान दिशा की ओर मुंह करके अध्ययन आदि कार्य करें।

प्रश्न - वसतिका की छत दक्षिण और पश्चिम की ओर ढ़लान पर है तो क्या करें ?

उत्तर - ढ़लान दक्षिण में हो तो पश्चिम में बैठें, यदि ढ़लान पश्चिम में हो तो दक्षिण में बैंठे।

प्रश्न - वसतिका में साधक किस क्रम में बैठें ?

उत्तर - यदि नैऋत्य से दक्षिण दिशा में कमरे, आग्नेय कोण तक बने हों तो बड़े साधक से क्रमशः छोटे साधक बैठें, ठीक इसी तरह नैऋत्य से पश्चिम होते हुये वायव्य की ओर के कमरों में उपरोक्त क्रम ही जानें।

प्रश्न - सल्लेखना में स्थित क्षपक को वसतिका में किस दिशा में रहना चाहिये, किस दिशा में मुंह करके बैठना चाहिये एवं किस दिशा में सिर करके लेटना चाहिए ?

उत्तर - **अ .** सल्लेखना में स्थित क्षपक को वसतिका में ठीक पूर्व दिशा की तरफ वाले कमरे में रहना चाहिए। ऐसा संभव नहीं हो तो उत्तर एवं वायव्य के बीच में यदि कोई कमरा हो तो वहाँ भी रहा जा सकता है।

ब. ''पाची णाभि मुहो वा उदीचि हुत्तो व तत्थ सो ढिच्चा।''

2031 भगवती आराधना

अर्थ - पूर्व या उत्तर की ओर मुंह करके क्षपक संस्तर पर बैठता है।

स. ''उत्तर सिर मधव पुव्वसिर''

2030 भगवती आराधना

अर्थ - क्षपक का सिर पूर्व दिशा या उत्तर दिशा की ओर रहे।

प्रश्न- वसतिका से निषीधिका किस दिशा में होनी चाहिये ?

उत्तर- जा अवरदक्खिणाए व दक्खिणाए व अहव अवराय।
वसधीदो विरड़ज्जड़ णिसीधिया सा पसत्थत्ति॥

1964 भगवती आराधना

अर्थ - निषीधिका क्षपक के स्थान से पश्चिम-दक्षिण दिशा (नैऋत्य) में या दक्षिण दिशा में या पश्चिम दिशा में हो तो उत्तम होती है।

प्रश्न - स्नान करते समय मुंह किस दिशा की ओर होना चाहिये ?

उत्तर - स्नान करते समय मुंह पूर्व दिशा की ओर सर्वश्रेष्ठ माना जाता है।

पद्मपुराण, पर्व 80 श्लोक 73

प्रश्न - आर.सी.सी. के मंदिर निर्माण, मन्दिरों के जीर्णोद्धार अथवा सामाजिक सम्पत्ति में परिवर्तन हेतु आपकी प्रेरणा एवं सान्निध्य, यदि किसी वास्तु विशेषज्ञ के निर्देश में नहीं हो तो क्या हानि हो सकती है ?

उत्तर- शास्त्र प्रमाण के बिना यदि देवालय, मंडप, धर्मशालाओं, गृह, दुकान और तलभाग आदि का विभाजन एवं नया निर्माण किया जाएगा तो उसका फल विपरीत मिलेगा, अरिष्ट होगा, असमय आयु का नाश होगा, पुत्र क्षय, कुल क्षय और मनसंताप होगा। लोभ के वशीभूत होकर मंदिरों के बाह्य भागों, धर्मशालाओं के आगे पीछे (सुविधानुसार) और मकानों के कमरों की दीवारें तोड़कर दुकानें बनाई जा रही हैं। किरायेदार रखने के लोभ से या भाईयों के आपसी वैमनस्य से मकान आदि के बीच यद्वा-तद्वा इच्छानुसार कहीं भी दीवार खड़ी करके विभाजन किये जा रहे हैं। प्राचीन मन्दिरों के स्तंभ तोड़कर उसकी जगह लोहे की गार्डर डालकर अपने को धन्य माना जा रहा है। लोहा और सीमेन्ट की अनुकम्पा से नवीन मंदिर (गुम्बज युक्त) गोदाम सदृश बनाए जा रहे हैं। विधान के विपरीत कार्य करने के फलस्वरूप ही चारों ओर मार-काट वैमनस्य, दुर्घटनाएँ और आग लगाकर अथवा गोलियाँ खाकर आत्म हत्याएँ हो रहीं हैं। जहाँ सुख-चैन की बंशी बजनी चाहिए थी वहाँ परिवार अपनी पुत्रवधुओं को आग लगाकर उनकी हत्याएँ कर रहे हैं।

वत्थुविज्जा, पृष्ठ चार-पांच

कुछ बातें..... जिनका ध्यान अवश्य रखा जाना चाहिए

1. भवन अथवा कमरे के प्रवेश द्वार के ठीक सामने न बैठें, न सोवें।
2. लोहे की गार्डर या आर.सी.सी. बीम, टांड के नीचे न कभी बैठें, न सोवें।
3. आप यदि मंदिर परिसर में रुके हैं तो 'जिन प्रतिमा' की पीठ जिधर पड़ती हो ऐसे कमरे में कदापि न रुकें।
4. गैर पिच्छिका धारी (जिनकी भूमिका है) ऐसे साधक जो विद्युत के यंत्रों का प्रयोग करते हैं वो यंत्र (बल्ब, ट्यूब, पंखा आदि) उनके ठीक ऊपर नहीं होना चाहिए।
5. ऐसा परिसर जहाँ तलघर हो अगर वहाँ रुकते हैं तो तलघर सम्पूर्ण परिसर के पूर्व-उत्तर (ईशान) दिशा में होना चाहिए।
6. जाप्य, ध्यान अथवा पूजन जिनप्रतिमा के सम्मुख करने से दिशाओं का दोष नहीं होता है, लेकिन वसतिका/घर में पूर्व अथवा उत्तर में ही करना चाहिये।
7. गुरु जो वर्तमान में मौजूद हैं उनकी तस्वीर ईशान में किन्तु जो समाधिस्थ अथवा निर्वाण को प्राप्त हो चुके हैं उनकी तस्वीर नैऋत्य या दक्षिण में लगाएँ।
8. झूठे बर्तन मकान परिसर से बाहर और बाउण्ड्री वाल के भीतर अथवा रसोई के बाहर ही रखना व साफ करना चाहिए।

दिशाएँ कैसे ज्ञात करें :

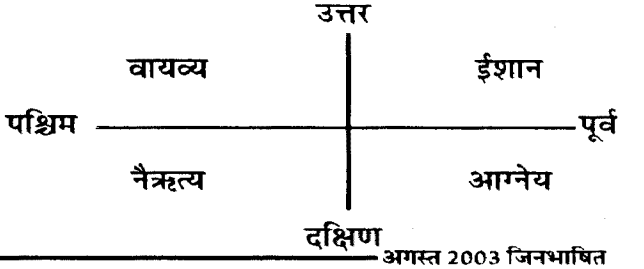

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वस्त्र परिवर्तन करने का मुहूर्त :

नक्षत्र - रेवती, उ. फाल्गुनि, उत्तराषाढ़ा, उ.भाद्रपद, रोहिणी, पुष्य, पुनर्वसु, अश्विनी, हस्त, चित्रा, स्वाति, विशाखा, अनुराधा, धनिष्ठा।

वार- बुध, गुरु, शुक्र, रवि

तिथि - 2/3/5/6/7/8/10/11/12/13/15 -

केवल ज्ञान प्रश्नचूड़ामणि (पृष्ठ 178 पर)

यात्रा मुहूर्त :

सब दिशाओं में यात्रा के लिये नक्षत्र--हस्त, पुष्य, अश्विनी, अनुराधा चारों दिशाओं के लिये शुभ होते हैं परन्तु मंगल, बुध, शुक्रवार को दक्षिण में नहीं जाना चाहिये।

वार शूल और नक्षत्र शूल

ज्येष्ठा नक्षत्र - सोमवार और शनिवार को पूर्व, पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र और गुरुवार को दक्षिण शुक्रवार को और रोहिणी नक्षत्र को पश्चिम एवं मंगल तथा बुधवार को उ. फाल्गुनी नक्षत्र में उत्तर दिशा की ओर नहीं जाना चाहिये।

शुभ नक्षत्र - अश्विनी, पुनर्वसु, अनुराधा, मृगशिरा, पुष्य, रेवती, हस्त, श्रवण, धनिष्ठा उत्तम हैं । तिथि 2/3/5/7/10/11/13

केवलज्ञानप्रश्नचूड़ामणि पृष्ठ 175

उपरोक्त बिन्दुओं के माध्यम से कोशिश की गई है कि आपके दैनन्दिनी जीवन में वास्तु सम्बन्धी सभी जिज्ञासाओं का समाधान हो। मुझे अत्यन्त हर्ष होगा जब आप उपरोक्त वास्तु विज्ञान से सम्बन्धित नियमों की अनुपालना कर बोधि और समाधि की प्राप्ति करें। इस अकिंचन को विज्ञजन सुझाव दें।

''नमन वास्तुकला''

835, मोहन वाटिका के पीछे
महावीर नगर, जयपुर 302018 (राज.)

बोध कथा

कपट का फल

एक बार कोई गीदड़ रात के समय जंगल में से भागकर किसी गाँव में आ गया, और जब उसे कहीं बाहर जाने का रास्ता न मिला तो एक घर में घुस गया। गीदड़ को घर में देखकर सब लोग उसे मारने दौड़े। गीदड़ भागता-भागता घर के बाहर आया, परन्तु वहाँ कुत्ते उसके पीछे लग गये, और वह एक नील के कुण्ड में गिर पड़ा।

नील कुण्ड में पड़ा हुआ गीदड़ बार-बार ऊपर चढ़ने का प्रयत्न करता, मगर फिर नीचे गिर पड़ता। अन्त में एक ज़ोर की छलाँग मारकर वह कुण्ड के बाहर निकल आया। कुण्ड से बाहर निकलते ही गीदड़ जंगल की ओर भागा।

नील कुण्ड में पड़े रहने के कारण उसका सारा शरीर नीले रंग में रँग गया था। इसलिए मार्ग में उसे रीछ, गीदड़ आदि जो जानवर मिलते, उससे पूछते, 'यह तेरा रूप-रंग कैसे बदल गया है ?'

गीदड़ जवाब देता, 'जंगल के समस्त प्राणियों ने मिलकर मुझे खसद्रुम नामक राजा बनाया है। अब तुम सब लोगों को मेरी आज्ञा का पालन करना होगा। जो मेरी आज्ञा न मानेगा, वह दण्ड का भागी होगा।'

जानवरों ने सोचा- बात तो ठीक मालूम होती है। इसका रंग-ढंग हम लोगों से भिन्न है, इसके ऊपर कोई दैवी कृपा जान पड़ती है।

जानवरों ने कहा, 'महाराज, आपने बड़ी कृपा की जो यहाँ पधारे। हम सब आपके नौकर हैं, कहिए क्या आज्ञा है ?'

खसद्रुम ने उत्तर दिया, 'तुम लोग मेरे लिए फ़ौरन ही हाथी का प्रबन्ध करो।'

जानवर एक हाथी को पकड़ लाये। खसद्रुम बड़ी शान से हाथी पर बैठकर जंगल में घूमने लगा।

एक दिन रात के समय सब गीदड़ रो रहे थे। खसद्रुम भी उनके स्वर में स्वर मिलाकर रोने लगा। हाथी को जब मालूम हुआ कि कपटी गीदड़ उसकी पीठ पर चढ़ा फिरता है तो उसने उसे अपनी सूँड़ में लपेट, नीचे गिराकर मार डाला।

''दो हजार वर्ष पुरानी कहानियाँ'' डॉ. जगदीशचन्द्र जी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वाग्वर क्षेत्र का सुन्दर सृजनः वाग्वर सम्मेद शिखर पर्वत रचना

नरेन्द्र जैन

राजस्थान के बांसवाड़ा-डूंगरपुर जिले में बना वाग्वर क्षेत्र प्राचीनकाल से धर्म से युक्त प्राचीन जिनालयों से विभूषित पांडवों की जोगस्थली माही, अनास नदियों की रंग स्थली, चर्तुविध संघों की चातुर्मास स्थली, स्नेहीजनों की आवास स्थली के रूप में प्रसिद्ध है। इसी वाग्वर क्षेत्र के बांसवाड़ा जिले के नौगामा ग्राम में सुक नदी व नाला की संगम स्थली पर प्राचीन पाषाण निर्मित नसियाजी मंदिर है। मंदिर में श्याम पाषाण का प्राचीन स्तूप दर्शनीय है, जिसके ऊर्धभाग पर सिद्ध परमेष्ठी, मध्य भाग में अरहंत परमेष्ठी व अधोभाग में आचार्य, उपाध्याय व साधु परमेष्ठी के आकार अंकित हैं। स्तूप पर सं. 1591 के लेख व जैनाचार्यों के नाम अंकित हैं। निकट ही सोलह पगी छतरी के सोलह खम्भों पर जैनाचार्यों के आकार अंकित हैं।

नौगामा दिगम्बर जैन समाज द्वारा इस प्राचीन क्षेत्र पर वाग्वर सम्मेद शिखर पर्वत रचना करने का निर्णय किया गया। क्षेत्र पर कृत्रिम रूप से 25 टोंकें ऊँची नीची पहाड़ियों पर बनाये गये। इन्हीं पहाड़ियों में ही गन्धर्व नाला, शीतल नाला की रचना की गई। सम्मेद शिखर की तरह ही जलमंदिर व मानतुंगाचार्य, गुणभद्राचार्य, भद्रबाहु आचार्य व पार्श्वनाथ गुफा का निर्माण हुआ। इस क्षेत्र पर वंदना करते हुए यात्री कई बार भ्रम में पड़ जाता है कि कहीं वह वास्तविक रूप से शिखरजी की यात्रा कर रहा है। शीतल जल के फुब्बारे से सज्जित जल मंदिर हिरण, शेर, सूखे पेड़ पर बैठे वानर की प्रतिकृति, शीतल छाँव से युक्त गुफाएँ आदि देखकर यात्री भाव-विभोर हो जाते हैं और उन कारीगरों की भूरी-भूरी प्रशंसा करने लगते हैं, जिन्होंने अपने हाथों से पत्थर को भी मोम बना दिया है।

एक किवदन्ती के अनुसार यहाँ जो भक्त अपनी मनोकामना मांगता था वह पूरी हो जाती थी जिससे यह क्षेत्र आसपास के जैन जैनेतर समाज में अगाध श्रद्धा का केन्द्र बन गया है।

क्षेत्र परिसर में आसपास छितराई हुई काली चट्टानें, जलमंदिर के पीछे की ओर कल-कल बहती सरीता द्वय, आस्ट्रेलियन घास युक्त पुष्पपाटिका, शीतल जल युक्त गंधर्व नाला, शीतल नाला, गुलाब, जुही, मोगरा पुष्पों के सुवासित महक, टोंकों के शिखर से गूंजती घण्टियों की मधुर खनक, क्षेत्र परिसर में बहती शीतल बयार, पहाड़ियों के आसपास उगी लताकुंज, वृक्ष आदि से ऐसा लगता है मानो प्रकृति यहाँ पर टूट पड़ी हो। भगवान् महावीर की श्यामवर्ण प्रतिमा, मानस्तम्भ, कलात्मक रूप से बना चुग्गादाना, स्तम्भ आदि इस क्षेत्र की सुंदरता में चार चाँद लगा देते हैं। प्रकृति की गोद में बसा नसीयाजी अतिशय क्षेत्र ''वाग्वर सम्मेद शिखर पर्वत रचना'' के नाम से जैन तीर्थ के नक्शों में अपनी अमिट छाप छोड़ रहा है।

आग्रह है पूज्य संतगण, श्रद्धेय विद्वत्जन व श्रीमंत श्रेष्ठी वर्ग से कि वे 'वाग्वर सम्मेद शिखर रचना' के विकास में सार्थक पहल कर एवं इसे पुष्पित, पल्लिवित करने में अपनी सार्थक भूमिका का निर्वहन करें। क्षेत्र पर धर्मशाला, संत निवास, प्रवचन हाल के निर्माण की योजनाएँ प्रस्तावित हैं।

नसीया टेलिकाम सेंटर, नौगामा

सदस्यों से विनम्र निवेदन

अपना वर्तमान पता 'पिन कोड' सहित स्वच्छ लिपि में निम्नलिखित पते पर भेजने का कष्ट करें, ताकि आपको ''जिनभाषित'' पत्रिका नियमित रूप से ठीक समय पर पहुँच सके।

सर्वोदय जैन विद्यापीठ
1/205, प्रोफेसर्स कॉलोनी
हरीपर्वत, आगरा (उ.प्र.)
पिन कोड - 282 002

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिज्ञासा-समाधान

पं. रतनलाल बैनाड़ा

प्रश्नकर्त्ता - एच.डी.बोपलकर, उस्मानाबाद

जिज्ञासा - किसी तीर्थंकर का तीर्थकाल कब से माना जाना चाहिए?

समाधान - उपरोक्त विषय पर श्री तिलोयपण्णत्ति गाथा 1285 में इस प्रकार कहा है-

इगवीस-सहस्साणिं, दुदाल वीरस्स सो कालो॥ 1285॥

अर्थ - वीर भगवान् का तीर्थकाल इक्कीस हजार व्यालीस वर्ष प्रमाण है॥ 1285॥ अर्थात् भगवान् महावीर का छदमस्थकाल 12 वर्ष और केवलज्ञान काल 30 वर्ष है (देखें श्री तिलोयपण्णत्ति गाथा नं. 685) अर्थात् चतुर्थकाल के 42 वर्ष + 3 वर्ष साढ़े 8 माह शेष रहने पर भगवान् की दीक्षा हुई थी और पंचमकाल के तीन वर्ष साढ़े 8 माह शेष रहने पर धर्म की व्युच्छित्ती हुई थी। अत: उपरोक्त गाथा से स्पष्ट होता है कि तीर्थकाल का प्रारंभ दीक्षा लेते ही मानना चाहिए।

परन्तु श्री धवलाकार एवं श्री कषायपाहुड़कार का मत इससे भिन्न है। जैनेन्द्र सिद्धान्त कोष भाग-3, पृष्ठ 291 पर तीर्थ उत्पत्ति के संबंध में श्रीधवला पुस्तक-1 का प्रमाण इस प्रकार दिया है-

इम्मिस्से वसिप्पिणीए चउत्थ-समयस्स पिच्छमे भाए।
चोत्तीसवाससेसे किंचिविसेसूणए संते ॥ 55॥
वासस्स पढममासे पढमे पक्खम्हि सावणे बहुले।
पाडिवदपुव्वदिवसे तित्थुप्पत्ती दु अभिजिम्हि॥ 56॥
सावण बहुलपडिवदे रुद्दमुहुत्ते सुहोदये रविणो।
अभिजिस्स पढमजोए जत्थ जुगादी मुणेयव्वो॥ 75॥

अर्थ- इस अवसर्पिणी कल्पकाल के दु:षमा सुषमा नाम के चौथे काल के पिछले भाग में कुछ कम 34 वर्ष बाकी रहने पर, वर्ष के प्रथम मास अर्थात् श्रावण मास में प्रथम अर्थात् कृष्णपक्ष प्रतिपदा के दिन प्रात:काल के समय आकाश में अभिजित नक्षत्र के उदित होते रहने पर तीर्थ की उत्पत्ति हुई॥ 55-56॥ श्रावण कृष्ण प्रतिपदा के दिन रुद्रमुहूर्त में सूर्य का शुभ उदय होने पर और अभिजित् नक्षत्र के प्रथम योग में जब युग की आदि हुई तभी तीर्थ की उत्पत्ति समझना चाहिए (श्री धवला पुस्तक-9 गाथा 29/120, तथा श्री कषाय पाहुड़ पुस्तक-1, गाथा 20/74 पर भी इसी प्रकार कहा है)।

श्री धवला पुस्तक-9 गाथा 120 में इस प्रकार कहा है-

छासट्ठिदिवसावणयणं केवलकालम्मि किमट्ठं करिदे।
केवलणाणे समुप्पण्णे वि तत्थ तित्थाणुप्पत्तीदो॥

अर्थ - केवलज्ञान की उत्पत्ति हो जाने पर भी 66 दिन तक उनमें तीर्थ की उत्पत्ति नहीं हुई थी, इसलिए उनके केवलीकाल में 66 दिन कम किए जाते हैं।

उपरोक्त श्री धवला व श्री कषायपाहुड़ के मतानुसार तीर्थ की उत्पत्ति अथवा तीर्थकाल का प्रारंभ दिव्यध्वनि के आरंभ से है। बहुत से आचार्यों एवं विद्वानों के मुख से भी भगवान् महावीर के तीर्थ की उत्पत्ति श्रावण वदी एकम ही सुनते आए हैं। तीर्थ की उत्पत्ति दीक्षाकाल से होती है ऐसा कभी सुनने में नहीं आया। फिर भी श्री तिलोयपण्णत्तिकार का उपरोक्त मत विद्वानों के द्वारा ध्यान में रखने योग्य है।

जिज्ञासा- हींग भक्ष है या अभक्ष ?

समाधान - ईरान, काबुल आदि स्थानों में एक वृक्षों की जाति ऐसी है, जिनमें चीरा लगाने से दूध की तरह एक वस्तु टपकती है। नीचे गड्ढा कर दिया जाता है, जिसमें यह दूध-सा पदार्थ इकट्ठा होता रहता है, इसी पदार्थ को हींग कहते हैं। इस वस्तु को जब गड्ढे से निकाला जाता है तब यह लिवलिवे की शक्ल में होता है। ईरान के लोग इस पदार्थ को बकरे की खाल में पैक करते हैं और काबुल के लोग प्लास्टिक या टाट की पैकिंग में पैक करते हैं। काबुल या ईरान से भारत आने तक यह पदार्थ सूखता नहीं है बल्कि लिवलिवे की शक्ल में बना रहता है। यहाँ आने पर उन बोरों या बकरे की खाल को बड़े-बड़े चाकुओं से काटकर इस लिवलिवे पदार्थ को सुखाया जाता है। हाथरस आदि स्थानों पर इस गीली हींग को सुखाने की बहुत सारी फैक्ट्रियाँ हैं। इसको सुखाकर फिर इसकी पैकिंग की जाती है।

बाजार में हींग दो प्रकार की बिकती है। एक तो वह है जो एक इंची-डेढ़ इंची के टुकड़ों में आती है और जिसे उत्तर प्रदेश में हड्डा हींग कहा जाता है। इसका रंग कत्थे जैसा गहरा होता है यह ईरान से आई हुई बकरे की खाल वाली हींग है। यदि इसको सूंघा जाए तो इसमें खाल की बदबू भी आती है और यदाकदा बकरे के बाल भी दिखाई देते हैं। दूसरी हींग वह है जो चूरे की शक्ल में बिकती है और जिसे हींगड़ा के नाम से पुकारा जाता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यह दाने के रूप में बिकती है इसका रंग हरा होता है यह वह है जो काबुल से प्लास्टिक या टाट की पैकिंग में आती है इसका भाव वर्तमान में 240 रुपया प्रति सौ ग्राम है।

उपरोक्त दोनों प्रकार की हींगों में से ईरान वाली हींग तो अभक्ष ही है वह हमको नहीं खानी चाहिए। परन्तु जो चूरा हींग आती है उसमें कोई दोष दिखाई नहीं पड़ता। यह चूरा हींग भक्ष है। पू. मुनि श्री प्रमाणसागर जी महाराज से जब वे बिहार करते हुए हाथरस पधारे थे तब मैंने स्वयं हाथरस जाकर, वहाँ की कई फैक्ट्रियों के मालिकों से स्वयं मिलकर उपरोक्त जानकारी प्राप्त करके उनको बताई। पूज्य मुनिश्री का कहना था कि यह पदार्थ कई माह तक गीला सा रहता है, इसमें भी तो त्रस जीवों की उत्पत्ति हो जाती होगी। इस संबंध में जानकारी करने हेतु आगरा के एक प्रसिद्ध डॉ. अनिल कुमार जैन की मैंने सहायता ली। डॉ. साहब ने गीली हींग का पैथोलोजी लैब में जाकर माइक्रोस्कोप द्वारा अच्छी प्रकार टैस्ट किया और बताया कि यह हींग तो वैक्टीरिया को नष्ट करने वाली वस्तु है। इसमें माइक्रोस्कोप से देखने पर एक भी वैक्टीरिया दिखाई नहीं पड़ता है। कल्चर करके देखने पर भी एक भी वैक्टीरिया दिखाई नहीं पड़ता है। अतः यह चूरा हींग (अपनी बुद्धि से देखने पर तो) भक्ष प्रतीत होती है। यदि सूक्ष्म दृष्टि से कोई दोष हो तो वह हमारे इन्द्रिय ज्ञान से अतीत है।

निष्कर्ष यह है कि हड्डा हींग जो कत्थे जैसे रंग वाली है, वह अभक्ष है और चूरा हींग जो हरे रंग वाली है, उसे भक्ष मानना चाहिए।

नोट - इस संबंध में कोई और विशेष बात हो तो पाठकगण मुझे लिखने का कष्ट करें।

जिज्ञासा - भोगभूमि में जलचर जीव तो पाये नहीं जाते केवल थलचर व नभचर जीव पाए जाते हैं। तो इन थलचर व नभचर जीवों की उत्कृष्ट आयु कितनी माननी चाहिए?

समाधान- श्रीमूलाचार गाथा 1113 में इस प्रकार कहा है-

पक्खीणं उक्कस्सं वाससहस्सा बिसत्तरी होंति।
एगा य पुव्वकोडी असण्णीणं तह य कम्मभूमीणं॥ 1113॥

अर्थ- पक्षियों की उत्कृष्ट आयु बहत्तर हजार वर्ष है तथा असंज्ञी जीव और कर्मभूमि जीवों की उत्कृष्ट आयु एक कोटिपूर्व वर्ष है॥ 1113॥

श्री तिलोयपण्णत्ति अधिकार-5, गाथा 285 में इस प्रकार कहा है-

बाहत्तरि बादालं वास-सहस्साणि पक्खि-उरगाणं।
अवसेसा-तिरियाणं, उक्कस्सं पुव्व-कोडीओ॥ 285॥

अर्थ- पक्षियों की आयु बहत्तर हजार वर्ष और सर्पों की आयु बयालीस हजार वर्ष प्रमाण होती है। शेष तिर्यंयों की उत्कृष्ट आयु एक पूर्वकोटि प्रमाण है॥ 285॥

श्री राजवार्तिक में अध्याय-3 के अंतिम सूत्र 'तिर्यग्योनि-जानां च' ॥ 39॥ की टीका करते हुए श्री अकलंक देव ने इस प्रकार कहा है-

पञ्चेन्द्रियाणां पूर्वकोटिनवपूर्वाङ्गानि द्विचत्वारिंशद् द्वासप्ततिवर्ष- सहस्त्राणि त्रिपल्योपमा च ।5। पञ्चेन्द्रियाः तैर्यग्योनाः पञ्चविधाः जलचराः, परिसर्पाः, उरगाः, पक्षिणः, चतुःपादश्चेति। तत्र जलचराणमुत्कृष्टा स्थितिः मत्स्यादीनां पूर्वकोटी। परिसर्पाणां गोधानकुलादीनां नव पूर्वाङगानि। उरगाणां द्विचत्वारिंशद्वर्षसहस्त्राणि। पक्षिणां द्वासप्ततिवर्षसहस्त्राणि। चतुः पदां त्रीणि पल्योपमानि। सर्वेषां तेषां जघन्या स्थितिरन्तर्मूहर्ता।

अर्थ - पंचेन्द्रिय तिर्यंचों की उत्कृष्ट आयु एक पूर्वकोटि, नौ पूर्वांग, 42000 वर्ष, 72000 वर्ष और तीन पल्य है॥ 5॥

पंचेन्द्रिय तिर्यंच पाँच प्रकार के हैं- जलचर, परिसर्प, सर्प, पक्षी और चतुष्पद (चार पैर वाले पशु) इनमें जलचरों की उत्कृष्ट आयु मच्छ आदि की एक करोड़ पूर्व है। परिसर्प, गोह, नकुल आदि की नौ पूर्वांग है, सर्पों की 42000 वर्ष, पक्षियों की 72000 वर्ष और चतुष्पदों की तीन पल्य है। सबकी जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त है।

उपरोक्त प्रमाण से यह स्पष्ट होता है कि उत्तम भोगभूमि में पाये जाने वाले हाथी आदि पशुओं की आयु तीन पल्य और पक्षियों की आयु 72000 वर्ष माननी चाहिए। किन्हीं विद्वानों के मुख से ऐसा सुना जाता है कि उत्तम भोगभूमि के सभी तिर्यंचों की आयु तीन पल्य होती है परन्तु वह कथन आगम सम्मत प्रतीत नहीं होता। उपरोक्त राजवार्तिक के कथनानुसार पक्षियों की आयु 72000 वर्ष से अधिक नहीं होती। श्लोकवार्तिक के महान् टीकाकार पं. माणिकचंद जी कोंदेय ने श्लोकवार्तिक पंचम खण्ड, पृष्ठ 395 पर लिखा है "पक्षियों की उत्कृष्ट आयु 72000 वर्ष है, भोगभूमि में पाये जा रहे पक्षियों में यह आयु संभवती है।" अतः उत्तम भोगभूमि के चतुष्पद पशुओं की आयु तीन पल्य और पक्षियों की आयु 72000 वर्ष मानना उचित है।

जिज्ञासा - केवली भगवान् के नौ भेद किस प्रकार हैं, समझाइये?

समाधान - आगम में केवली भगवान् के नौ भेद इस प्रकार कहे हैं-

1. पाँच कल्याणक वाले तीर्थंकर
2. तीन कल्याणक वाले तीर्थंकर
3. दो कल्याण वाले तीर्थंकर
4. अन्तः कृत केवली

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

5. उपसर्ग केवली
6. समुद्घात केवली
7. मूक केवली
8. सामान्य केवली
9. अयोग केवली

जिज्ञासा - क्या मिथ्यादृष्टि जीव सौधर्म स्वर्ग की उत्कृष्ट आयु प्राप्त कर सकता है ?

समाधान - उपरोक्त प्रश्न के समाधान में श्री धवला पुस्तक-4 में कहा है कि सौधर्म कल्प में उत्पन्न होने वाले मिथ्यादृष्टि जीव, उत्कृष्ट आयु ढाई सागर प्राप्त नहीं कर सकते। प्रमाण इस प्रकार हैं-

''मिच्छादिट्ठी जदि सुह महंतं करेदि। तो पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागेणब्भधियवेसागरोवमाणि करेदि। सोहम्मे उप्पज्जमाणमिच्छादिट्ठीणं एदम्हादो अहियाउट्ठवणे सत्तीए अभावा। ..... अंतोमुहुत्तूणड्ढाइज्जसागरोवमेसु उप्पण्णसम्मादिट्ठिस्स सोहम्मणिवासिस्स मिच्छत्तागमणे संभवाभावो..... भवणादिसहस्सारंतदेवेसु मिच्छाइट्ठिस्स दुविहाउट्ठिदिपरुवणा हाणुबवत्तीदो।''

अर्थ - मिथ्यादृष्टि जीव यदि अच्छी तरह खूब बड़ी भी स्थिति करे, तो पल्योपम के असंख्यातवें भाग से अभ्यधिक दो सागरोपम करता है, क्योंकि सौधर्म कल्प में उत्पन्न होने वाले मिथ्यादृष्टि जीवों के इस उत्कृष्ट स्थिति से अधिक आयु की स्थिति स्थापन करने की शक्ति का अभाव है। ..... अन्तर्मुहूर्त कम ढाई सागरोपम की स्थिति वाले देवों में उत्पन्न हुए सौधर्म निवासी सम्यग्दृष्टि देव के मिथ्यात्व में जाने की सम्भावना का अभाव है। ..... अन्यथा भवनवासियों से लेकर सहस्त्रार तक के देवों में मिथ्यादृष्टि जीवों के दो प्रकार की आयु स्थिति की प्ररूपणा हो नहीं सकती थी।

जिज्ञासा - वर्तमान में कुछ मुनिराज अपने हाथ में आए किसी मिष्ठान को, किसी अपने भक्त के लिए प्रसाद रूप में देने लगे हैं। क्या उनका इस तरह देना आगम सम्मत है ?

समाधान - श्री योगसार प्राभृत (ज्ञानपीठ प्रकाशन, पृष्ठ 183) में आचार्य अमितगति महाराज ने इस प्रकार कहा है-

पिण्डः पाणि-गतोऽन्यस्मै दातुं योग्यो न युज्यते।
दीयते चेन् न भोक्तव्यं भुङ्क्ते चेद् दोषभाग् यतिः॥64॥

अर्थ- साधु के हाथ में पड़ा हुआ आहार दूसरे को देने के योग्य नहीं होता (और इसलिए नहीं दिया जाता) यदि दिया जाता है तो साधु को फिर भोजन नहीं लेना चाहिए, यदि वह साधु अन्य भोजन करता है तो दोष का भागी होता है।

व्याख्या - साधु के हाथ में पड़ा हुआ आगम से अविरुद्ध योग्य आहार (भोजन का ग्रास) किसी दूसरे को देने के योग्य नहीं होता। यदि वह साधु अपनी रुचि तथा पसन्द न होने के कारण उसे स्वयं न खाकर किसी को देता है या किसी अन्य को खाने के निमित्त कहीं रख देता है तो उस साधु को फिर और भोजन नहीं करना चाहिए, यदि वह दूसरा भोजन करता है तो दोष का भागी होता है सम्भवतः 'यथालब्ध' शुद्ध भोजन न लेने आदि का उसे दोष लगता है।

(व्याख्याकार-पं. जुगलकिशोर जी मुख्तार ''युगवीर'')

जिज्ञासा- तिर्यंचों में कितने संस्थान पाये जाते हैं ? क्या कोई तिर्यंच समचतुरस्त्र संस्थान वाले भी हो सकते हैं।

समाधान - उपरोक्त विषय पर श्रीमूलाचार गाथा 1091 की टीका में इस प्रकार कहा है-

हरितत्रसाः प्रत्येकसाधारणवादरसूक्ष्म वनस्पति द्वीन्द्रिय त्रीन्द्रिय चतुरिन्द्रियाः,

णेगसंठाणा-अनेकसंस्थाना नैकमनेकमनेकं संस्थानं येषां तेऽनेकसंस्थाना अनेक हुंडसंस्थानविकल्पा अनेकशरीराकाराः।

अर्थ - प्रत्येक, साधारण, वादर, सूक्ष्म वनस्पति, द्विन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय जीव के शरीर का आकार एक प्रकार का नहीं है, अनेक आकार रूप है अर्थात् ये सब अनेक भेद रूप हुण्डक संस्थान वाले हैं। पचेन्द्रिय तिर्यंचों के बारे में गाथा नं. 1092 में कहा है कि पंचेन्द्रिय तिर्यंच छहों संस्थान वाले होते हैं।

श्री सिद्धांतसागर दीपक में भी इस प्रकार कहा है-

मनुष्याणां च पञ्चाक्षतिरश्चां सन्ति तानि षट्।
देवानामादिसंस्थान नारकाणां हि हुण्डकम्॥ 116॥
द्वित्रितुर्येन्द्रियाणां च सर्वेषां हरिताङ्गिनाम्।
अनेकाकारसंस्थानं हुण्डाख्यं स्याद् विरूपकम॥ 117॥

अर्थ- मनुष्यों और पंचेन्द्रिय तिर्यंचों के छहों संस्थान होते हैं। देवों के समचतुरस्त्र एवं नारकियों के हुण्डक संस्थान ही होते हैं॥116॥ द्विन्द्रिय, त्रीन्द्रिय और चतुरिन्द्रिय जीवों के तथा सम्पूर्ण वनस्पतिकायिक जीवों के विविध आकारों को लिए हुए विरूप आकार वाला हुण्डक संस्थान होता है॥ 117॥

उपरोक्त प्रमाणों के अनुसार एकेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय तिर्यंचों के अनेक आकार वाला हुण्डक संस्थान एवं पंचेन्द्रिय तिर्यंचों में छहों संस्थान पाए जाते हैं।

1/205, प्रोफेसर कॉलोनी,
आगरा-282 002

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सांगानेर का सच

निर्मल कासलीवाल, जयपुर

पिछले कई माह से श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र मंदिर संघीजी के बारे में अनेक पत्र-पत्रिकाओं में निकले लेखों के कारण समाज भ्रमित हुई। वास्तव में सच क्या है ? उसे प्रकाशित नहीं किया गया। ऐसे कुछ व्यक्ति हैं जो समाज के विकास में बाधक बन गये और समाज को बांटने पर तुल गये। संघीजी मंदिर के जीर्णोद्धार और संवर्द्धन को पुरातत्व से छेड़छाड़ करना बता रहे हैं, जो असत्य है। पुरातत्व एवं संग्रहालय विभाग राजस्थान, जयपुर के निदेशक ने कमेटी द्वारा जीर्णोद्धार की सहमति मांगे जाने पर पत्र क्रमांक 882 दिनांक 24 जनवरी 2001 को लिखित पत्र में स्पष्ट सहमति जीर्णोद्धार की दी।

सहमति पत्र क्रमांक 882/24.1.20011 पर संलग्न है

कमेटी ने अपने समयानुकूल जब कार्य प्रारम्भ किया तो कुछ प्रबुद्ध लोगों ने पत्र - पत्रिकाओं में पुरातत्व का विनाश हो रहा है ऐसा बताकर कार्य को रूकवाना चाहा। यह जो मंदिर सांगानेर वाले बाबा के नाम से प्रसिद्ध है जिसमें विराजमान श्री आदिनाथ भगवान् की प्रतिमा चतुर्थकालीन सातिशय चमत्कारी है, आज तक कई राजाओं ने इसके विध्वंश की सोची पर वे अपने शस्त्र डालकर बाबा से क्षमायाचना कर मंदिर का संरक्षण किया और संवर्द्धन भी किया। जब आज पुनः जीर्णोद्धार की बात चली तो उसका विरोध क्यों ? क्या वास्तव में जीर्णोद्धार करना पुरातत्व से छेड़छाड़ करना है ? इसका उत्तर आगे दिया जायेगा अभी तो मंदिर की भव्यता और अतिशयता की बात चल रही है। यहाँ की प्रतिमाओं के दर्शन करने मात्र से ही आत्म सन्तुष्टि मिलती है, चतुर्थकालीन प्रतिमाओं का दर्शन करने से ही हमारे अनेक संताप मिट रहे हैं और लगता है कि आज साक्षात जिनेन्द्रदेव के दर्शन किये हैं। इस सातिशय मंदिर के दर्शन चारित्र चक्रवर्ती आचार्य शान्तिसागर जी महाराज, आचार्य देशभूषणजी महाराज, आचार्य वीरसागरजी महाराज, आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज आदि अनेक संतों ने, विद्वानों ने, वैज्ञानिकों ने किये और गुण गाये हैं।

श्री मिलापचन्दजी जैन 'लोकायुक्त' राजस्थान सरकार आपने भी सांगानेर संघीजी मंदिर के दर्शन कर कहा कि 'मूलनायक भगवान् आदिनाथ की प्रतिमा के दर्शन कर मुझे बड़ी शांति मिली, मंदिर की प्राचीनता भी हृदय को प्रभावित करने वाली है। मंदिर में काफी काम हुआ है पर यह नहीं लगता कि प्राचीनता का कोई विनाश यहाँ हुआ हो'।

उक्त हस्तलिखित टिप्पणी क्रमांक 2 पर संलग्न है।

इसी तरह श्रीमती भावना देवराज चिखलिया, केन्द्रिय राज्यमंत्री, संस्कृति एवं पर्यटन विभाग ने भी जीर्णोद्धार के कार्य को देखकर कहा कि - 'पुरातत्व को देखकर / ध्यान में रखकर ही जीर्णोद्धार कार्य किया जा रहा है, इन निर्माण कार्यों से पुरातत्व की हानि नहीं हुई है। प्राचीन शिखर यथास्थिति में है'।

उक्त हस्तलिखित टिप्पणी क्रमांक 3 पर संलग्न है।

इस सन्दर्भ में विरोध के स्वर को पुरातत्व की रिपोर्ट देखना चाहिये रिपोर्ट में मंदिर के जीर्णोद्धार की प्रशंसा की गई है। ऐसे कुछ बिन्दु है जिससे समाज सत्य क्या है ? असत्य क्या है ? परख सकती है और दुर्विचार फैलाने वाले विरोध स्वर की असत्यता समझ सकती है।

१. पुरातत्व विभाग की जांच रिपोर्ट जो की जिलाधीश महोदय को भेजी गई थी जिसमें स्पष्ट लिखा हुआ है कि यह मंदिर पुरातत्व एवं संग्रहालय विभाग द्वारा संरक्षित स्मारक नहीं है। अतः यह मंदिर दिगम्बर जैन समाज का निजी मंदिर है इसके विकास कार्यों में सरकार दखल करे यह विधि सम्मत नहीं है।

उक्त जांच रिपोर्ट क्रमांक 4 पर संलग्न है।

2. विरोध किस बात का, जीर्णोद्धार का या पुरातत्व का। विरोध करने वालों को सोचना चाहिये कि उनकी इस नासमझी से समाज बदनाम हुई है।

3. पुरातत्व एवं संग्रहालय विभाग के दखल की यहाँ जरा भी गुंजाईश नहीं है फिर भी पुरातत्व विभाग के तकनीकी अधिकारियों ने यहाँ के जीर्णोद्धार कार्य का अवलोकन कर अपने पत्र क्रमांक पु.सं. / तक / 2000/1235 दिनांक 31.1.2001 के द्वारा जीर्णोद्धार कार्य को उचित ठहराया।

उक्त जांच रिपोर्ट क्रमांक 5 पर संलग्न है।

4. जीर्णोद्धार की आवश्यकता क्यों हुई - चूंकि मंदिर काफी प्राचीन है, जिसकी घुमटियाँ चूने आदि से बनी हुई हैं। बरसात के दिनों में इन जीर्णशीर्ण घुमटियों से रिस-रिस कर पानी प्रतिमाओं के ऊपर गिरने लगा और दिवारों पर सीलन आ गई, आदि अनेक कारणों से मंदिर के जीर्णोद्धार की अतिआवश्यकता

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हुई।

5. यहाँ जो निर्माण कार्य हुआ है वह प्राचीन शैली का अनुसरण करके हुआ है जिससे मंदिर की भव्यता में चार चांद लगे हैं, इससे दर्शनार्थियों की संख्या बढ़ी है।

6. विरोध स्वर जरा सोचे यदि किसी ऐसे स्मारक जो अति प्राचीन है, उनका जीर्णोद्धार न किया जाये तो उसका अस्तित्व कब तक? जीर्णोद्धार से संस्कृति और सभ्यता की रक्षा हुई है, वरना समय के बहाव में यह मंदिर भी गुम हो जाता।

7. पुरातत्व विभाग के अधिकारियों ने भी यहाँ के कार्यों का अवलोकन किया तो उन्होंने मुक्त कंठ से जीर्णोद्धार की प्रशंसा की।

8. फिर किन कारणों से विरोध स्वर 'जीर्णोद्धार को विरासत से छेड़छाड़' कह रहा है? ईर्ष्यावश क्या ?

9. विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में जो लेख आये वह अपूर्ण जानकारी और राजनीति पहुंच, प्रभाव के कारण अनर्गल आये जिससे समाज भ्रमित हुई है, बदनाम हुई है।

10. जब विरोध का स्वर मुखरित हुआ निसंदेह जीर्णोद्धार में रूकावट आई। लेकिन प्रशासन, पुरातत्व, जांचदल आदि ने जीर्णोद्धार को कतई गलत नहीं ठहराया। कार्यालय निदेशक पुरातत्व एवं संग्रहालय विभाग के पत्र क्रमांक 6228 दिनांक 26.4.2003 के द्वारा जीर्णोद्धार की लिखित सहमति दी।

उक्त पत्र क्रमांक 6 पर संलग्न है।

11. किसी ने सच ही कहा है कि क्रान्ति के बिना परिवर्तन नहीं, अतः विरोध स्वर से जीर्णोद्धार को बल ही मिला है।

यह विरोधी स्वर एक अपराधिक किस्म के एवं अजैन व्यक्ति गुलाबचन्द शर्मा से, जो कि पुलिस उपनिरीक्षक पद से डिसमिस और अपनी अपराधिक प्रवृत्तियों के लिये मशहूर है, ऐसे व्यक्ति से सहयोग लेकर तथा गैर पंजीकृत संस्था शिवा जन समस्या निवारण समिति के माध्यम से न्यायालय में जीर्णोद्धार के विरोध में जनहित याचिका लगाकर विघ्न डालने का कुप्रयास किया है। जो कि इस अल्पसंख्यक जैन समाज के लिये बहुत ही गम्भीर और सोचनीय विषय है कि इसके आगामी परिणाम कितने भयानक हो सकते हैं।

हमारा विरोध स्वर करने वालों से कोई द्वेष नहीं है। उनकी महत्वकांक्षा की आपूर्ति न होने पर ये स्वर उद्घोषित हुआ इससे समाज को असहनीय हानि उठानी पड़ी, समाज भ्रमित हुई। अब स्थिति सामान्य है, समाज ने भी पहचान कर ली कि सत्य क्या है? असत्य क्या है?

श्री निर्मल कासलीवाल,
मानद मंत्री, प्रबन्ध कारिणी कमेटी,
श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र मंदिर संघीजी, सांगानेर
जैन मंदिर रोड, सांगानेर (जयपुर)

विषय - श्री दिगम्बर जैन मंदिर संघीजी, सांगानेर शिखर जीर्णोद्धार/मरम्मत की अनुमति।

प्रसंग -आपका पत्रांक जे.एस.एस. /2427 दिनांक 1.1.2001

महोदय,

उपरोक्त प्रसंगोक्त पत्र के सन्दर्भ में श्री दिगम्बर जन संघीजी मंदिर में जीर्णोद्धार / संरक्षण /मरम्मत कार्य पुरातत्व शैली /मूल स्वरूप को बनाये रखते हुए कराये जाने में विभाग को कोई आपत्ति नहीं है।

आवश्यकतानुसार आप मण्डलीय अधीक्षक, पुरातत्व एवं संग्रहालय विभाग, जयपुर वृत, जयपुर से राय प्राप्त कर सकते हैं।

भवदीय
हस्ताक्षर
निदेशक

सांगानेर संघीजी के मंदिर के दर्शनों का मुझे आज सौभाग्य प्राप्त हुआ। मूलनायक भगवान् आदिनाथ की प्रतिमा के दर्शन करके मुझे बड़ी शांति मिली। मंदिर की प्राचीनता भी हृदय को प्रभावित करने वाली है। मंदिर में काफी काम हुआ है, मुझे यह नहीं ज्ञात होता कि प्राचीनता का कोई विनाश या विध्वंस हुआ है। यहाँ पर दर्शनार्थियों की संख्या निरन्तर बढ़ती रही है। व्यवस्था भी अच्छी है। दर्शनों का लाभ पाकर जीवन में सभी को सुख व शांति मिलती है। जीवन सफल होता है।

हस्ताक्षर
लोकायुक्त राजस्थान

आज दिनांक 4.6.2003 को श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र मंदिर संघीजी सांगानेर में विराजित प्रतिमा के दर्शन कर आत्म शांति मिली। भगवान् आदिनाथ के दर्शन कर अभिभूत हुई हूँ। और इस अवसर पर दर्शन कर यही कामना करती हूँ कि विश्व

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

में शांति हो। यहाँ पर हुए जीर्णोद्धार के कार्य को भी देखा जो कि पुरातत्व को ध्यान में रखकर किया जा रहा है। इन निर्माण कार्यों से पुरातत्व की हानि नहीं हुई है। प्राचीन शिखर यथा स्थिति में है, पुरातत्व विभाग की रिपोर्ट को भी देखा उस रिपोर्ट में भी मंदिर के जीर्णोद्धार की प्रशंसा की गई है। हम भी इस जीर्णोद्धार की प्रशंसा करते हैं पुरातत्व संरक्षण के लिये जो कार्य मंदिर समिति के द्वारा करवाये जा रहे हैं इसका वास्तव में जीवन्त स्वरूप देखना हो तो सांगानेर दिगम्बर जैन मंदिर संघीजी में देखा जा सकता है।

यहाँ मुख्य मूर्ति आदिनाथ भगवान् की पुरा महत्त्व की है और लगभग 4000 वर्ष से भी पूर्व की बताई गई है ऐसा मुझे भी प्रतीत होता है।

हस्ताक्षर
श्रीमती भावना चिखलीया
केन्द्रीय राज्यमंत्री
संस्कृति एवम् पर्यटन तथा संसदीय कार्य
भारत सरकार, नई दिल्ली

प्रबन्धकारिणी के पदाधिकारियों को मौके पर बतला दिया गया है कि देवालय के जीर्णोद्धार में देवालय के मूल स्वरूप में किसी प्रकार परिवर्तन नहीं किया जावे तथा जो कार्य मंदिर के मूल भाग से संबंधित हो उसके बारे में पुरातत्व विभाग से राय प्राप्त की जावे, जिसके बारे में प्रबंधंकारिणी के सदस्य सहमत हैं।

कृपया वस्तुस्थिति अवलोकनार्थ एवं अग्रिम कार्यवाही हेतु प्रस्तुत है।

हस्ताक्षर
निदेशक

श्री निर्मल कासलीवाल,

मानद मंत्री, प्रबन्धकारिणी कमेटी,

श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र मंदिर संघीजी, सांगानेर

विषय - श्री दिगम्बर जैन मंदिर संघीजी, सांगानेर के शिखर व अन्य जीर्णोद्धार मरम्मत की अनुमति।

महोदय,

उपरोक्त विषय में अधीक्षक, पुरातत्व एवं संग्रहालय विभाग, जयपुर वृत जयपुर के सुझावानुसार आप निर्माण कार्य करा सकते हैं।

भवदीय
हस्ताक्षर
निदेशक

मंत्री,

श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र मंदिर संघीजी, सांगानेर।

विषय : श्री दिगम्बर जैन मंदिर संघीजी, सांगानेर के संरक्षण कार्य बावत्।

प्रसंग : आपका पत्र क्रमांक 9136 दिनांक 21.06.2003

महोदय,

उपर्युक्त विषयान्तर्गत आपके प्रसंगोक्त पत्र के साथ प्रस्तुत परियोजना के पेज संख्या 19 से 22 पर प्रस्तावित संरक्षण कार्यों की सहमति, इस कार्यालय के पूर्व पत्र क्रमांक 882 दिनांक 24.01.2001 तथा 1235 दिनांक 31.01.2001 के क्रम में, निम्नांकित शर्तों पर दी जाती है-

1. स्मारक का संरक्षण कार्य प्रारम्भ करने से पूर्व वर्तमान स्थिति के फोटोग्राफ्स उपलब्ध कराने होंगे, उसके पश्चात् ही व्यवहारिक रूप में संरक्षण कार्य प्रारम्भ कराया जायेगा।

2. स्मारक के संरक्षण कार्य में लाई जाने वाली सामग्री स्मारक में मूल प्रयुक्त निर्माण सामग्री के अनुरूप ही काम में ली जावेगी।

3. स्मारक के मूल स्वरूप के स्थापत्य के अनुरूप संरक्षण कार्य कराना होगा।

4. उक्त कार्य विभाग की तकनीकी समिति के अधिकारियों की देखरेख में /निर्देशानुसार कराना होगा और कार्यों की गुणवत्ता संतोषप्रद नहीं होने या निर्माण सामग्री सही नहीं होने पर विभागीय प्रतिनिधि द्वारा कभी भी कार्य रूकवाया जा सकेगा।

5. कराये जाने वाले संरक्षण कार्यों का समस्त व्यय प्रन्यास को वहन करना होगा।

उपर्युक्त सहमति माननीय मंत्री, कला, संस्कृति एवं पुरातत्त्व की अनुमति आई.डी. संख्या 219/एम./ए. एण्ड सी./ 03 दिनांक 26.06.2003 के अनुसरण में जारी की जाती है।

हस्ताक्षर
निदेशक
राजस्थान सरकार
पुरातत्व एवं संग्रहालय विभाग, जयपुर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निदेशक,

पुरातत्व एवं संग्रहालय विभाग,

राजस्थान, जयपुर।

विषय : श्री दिगम्बर जैन मंदिर संघीजी सांगानेर शिखर व अन्य के जीर्णोद्धार / मरम्मत की अनुमति।

महोदय,

श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र मंदिर श्री संघीजी सांगानेर विभागीय राय से पूर्व निर्माण की स्थिति इस प्रकार है :-

मंदिर पर प्रवेशद्वार के जगती भाग पर से ऊपर तक आदिनाथ के जीवन चित्रण लाल पत्थर में उत्कीर्ण नया कराया जाकर प्लेटे मय लेख पट्टिकाएँ (देवनागरी लिपि) में सीमेंट से चिपकाकर निर्माण किया गया है। यह कार्य प्रवेशद्वार के बाई तरफ करवा रखा है दूसरी तरफ की दीवार को भी इस कार्य के लिए तैयार किया जा रहा है। मंदिर के प्रवेशद्वार पर अडंगा पत्थर (मार्बल) से उत्कीर्ण चौखट द्वारा बना हुआ है जो पुराना यथावत है। अन्दर चौक में प्रवेश करने पर बाईं तरफ सीढ़ियाँ लाल पत्थर के कटहरे की कटिंग के साथ नई बनाकर ऊपर जाने का रास्ता बनाया गया है।

दाहिनी तरफ एक ग्रेनाइट लगाकर ग्लास फिट करके काउन्टर बनाया गया है। चौक में जैन प्रतिमाएँ (चौबीसी) विभिन्न ताकों में एल्यूमीनियम धातु के फ्रेमों में कांच के ग्लासयुक्त किवाड लगाये हुए हैं। चौक में आंगन में कोटा स्टोन लगा हुआ है। मंदिर के मुख्य भाग चौक के बीच में मंदिर का मूल ढांचा है। पूर्वानुसार मौजूद है, जो अडंगा मार्बल से कलात्मक ढंग से बना हुआ है लेकिन इसके चारों तरफ के बरामदे सलेटी पत्थर राजगढ़ (बाड़ा बड़कोल) खान का है जिसमें देव कुलिकाओं की ताकें बरामदे के खम्भे आदि समस्त भाग इस पत्थर का बना हुआ है। बरामदे में लाल पत्थर के नये तोरण बनाये गये हैं। पीछे के भाग में ताकों को बंद कर जैन प्रतिमाएँ विराजमान कर चिप्स आदि की हुई है। मंदिर की द्वितीय मंजिल छत पर लाल पत्थर से नये बरामदे बनाकर उनमें जैन प्रतिमाएँ संगमरमर की एल्यूमीनियम के ग्लास फिटेड दरवाजों के अंदर रखी गई है। आंगन में प्रथम चौक के बरामदे निर्माण में अडंगा मार्बल की फर्श बनाई गई है। मूल मंदिर की छत पर चारों कोनों पर चार व चार अन्य शिखर बंद बने हुए हैं, जो काले पत्थर के बने हुए हैं। उनका अराइशी काम खराब हो गया है। इन शिखरों के बीच छोटी-छोटी चूने पत्थर की शिखर नमूने बाद में बने हुए हैं। इनमें से एक गुमटी बाई तरफ पुराने शिखरों से मेल खाती हुई नमूने बतौर बनाई हुई है। जो चूने वाली गुमटियों से ऊंचाई में अधिक है। सारे मंदिर में जहाँ-जहाँ भी नया निर्माण कराया हुआ है उसमें लाल पत्थर का है उसको पक्के रंग से पोता हुआ है।

उक्त स्थिति विभाग से राय लेने से पहले की है। अब आगे कराये जाने वाले कार्यों में मंदिर ट्रस्ट से कार्य कराने के सुझाव निम्न प्रकार हैं, जिनका मौके पर विचार-विमर्श किया गया-

1. ट्रस्ट द्वारा चौक में पत्थरों को (कोटास्टोन) हटाकर नया आंगन कराने की इच्छा जाहिर की है। अत: उन्हें अडंगा मार्बल के पत्थर पूर्व परम्परानुसार कम से कम तीन इंच (चार अंगुल) मोटाई में विभिन्न साईजों में पुराने तरीके से लगवाने के लिए सुझाव दिया गया है। जिस पर उन्होंने सहमति प्रकट की है। इस कार्य से मंदिर के पुराने कार्य के स्वरूप से मेल बना रहेगा।

2. सभी पत्थर जो लाल हैं उनका लाल रंग व सफेदी हटाया जाकर मूल स्वरूप बनाया जाये। मूल स्वरूप हेतु सहमति प्रकट की गई।

3. मंदिर के अन्दर के मार्ग में काले पत्थर वाले भागों पर पूर्वानुसार आराइशी कार्य कराया जाना पूर्वानुसार की सहमति प्रकट की गई है। इससे मूलस्वरूप यथावत रहेगा। देवकुलिकाओं में बनी चिप्स सफेदी सीमेन्ट हटा दी जायेगी।

4. मुख्य परिसर का बड़ा किवाड़ व मंदिर के सभी किवाड़ लकड़ी-पीतल के काम के (मुगली जोड़ियों) में बनवाया जाय तथा वर्तमान एल्यूमीनियम का ज्यादा बढ़ावा नहीं देंगे। चूंकि एल्यूमीनियम धातु पूजा में वर्जित है। इस पर सहमति प्रकट की गई।

मूल मंदिर के पुराने आठ शिखर हैं। उनके बीच-बीच में 2 गुमटी हटाकर नये 12 शिखर और पूर्व शिखरों के अनुरूप बनायेंगे जिसका एक नमूना (श्री हरफूलसिंह व श्री पंकज धीरेन्द्र की रिपोर्ट में वर्णित उचित है) का निर्माण कराया जायेगा। सहमति प्रकट की गई है। अत: कार्य मौके पर चालू रखने की व कार्य कराने के सुझाव प्रस्तुत हैं।

उक्त कार्यों के सम्बन्ध में समय-समय पर आवश्यकतानुसार मंदिर ट्रस्ट को निम्नहस्ताक्षरकर्ता की राय उपलब्ध कराने का कह दिया गया है।

सूचनार्थ एवं आवश्यक कार्यवाही हेतु प्रस्तुत है।

भवदीय
हस्ताक्षर
अधीक्षक,
पुरातत्व एवं संग्रहालय विभाग,
जयपुर वृत्त, जयपुर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समाचार

जबलपुर समाज ने धूमधाम से मनाया

प.पू. आचार्य शिरोमणि विद्यासागर महाराज का 36 वाँ दीक्षा-दिवस

जंगल वाले बाबा के नाम से सम्पूर्ण देश में प्रख्यात पू. मुनिश्रेष्ठ श्री चिन्मयसागरजी महाराज ने बड़े फुहारे के समीप विशाल धर्म सभा को सम्बोधित करते हुए बतलाया कि सम्पूर्ण विश्व में भारत को धर्म प्रधान प्रमुख राष्ट्र माना जाता है, यहाँ बड़े-बड़े संत और साहित्यकार हुए हैं। मुनिवर ने प्रात: स्मरणीय श्री तुलसी दास जी की दो पंक्तियां सुनाते हुए कहा- 'सुख, दारा और लक्ष्मी पापी के भी होय। संत-समागम, हरिकथा तुलसी दुर्लभ दोय।' संत समागम इसलिये महत्वपूर्ण है कि संत सत्य को नहीं छोड़ता और सत्य के बिना कोई संत नहीं कहला सकता। आप सभी ने संत शिरोमणि आचार्य विद्यासागर जी के दर्शन किये हैं, परन्तु सत्य यह है कि आप उनके वास्तविक दर्शन नहीं कर पाये हैं, यदि किये होते तो आप भी उनकी तरह हो लिए होते। मैंने किये हैं, अत: मैं उनके पथ पर चल रहा हूँ, आपने किये होते तो आप भी इस पथ पर दिख रहे होते।

संसारी-आदमी मकान देखने की तरह संतों को देखने लगा है वह रंग, रूप, कद पर भर ध्यान देता है, संत के अंतर में समाये हुए सूर्य को देखने का प्रयास नहीं करता। आज राष्ट्र संत पू. आचार्य श्री के इस दीक्षा-दिवस-समारोह पर आप सब जन संतों के अंतरंग के सूर्य का दर्शन करने का प्रयास करें और उनके दर्शन को लेकर जीवन-यात्रा पर चलें।

मुनि चिन्मय सागर से पूर्व मुनि श्री पावन सागर जी महाराज ने कहा कि पूज्य श्री को दीक्षा ग्रहण किये 35 वर्ष पूर्ण हो गये, वह शब्द 'दीक्षा' उन्हें अध्यात्म की ओर ले गया। इस शब्द में पांच अक्षर और मात्राएँ गुम्फित हैं जो अनेक लोग नहीं जानते, ये पांचों पंच परमेष्ठी के द्योतक हैं। दीक्षा को धारण कर आत्मा में रमण करना ही उसकी सार्थकता है। इसलिए 'दीक्षा' प्राप्त व्यक्ति ही साधु कहलाता है। इसे क्रोध, माया, मान, लोभ आदि विकारी तत्वों का त्याग कर, तपश्चर्या धारण करनी होती है। बुंदेलखण्ड का सौभाग्य है कि पू. आचार्य श्री ने अपने संघ को यहाँ ही विशाल रूप दिया था। दीक्षा के क्षण हर संत को जीवन भर, हर समय, याद रहते हैं फलत: वह अपनी चर्या बढ़ाता जाता है।

समारोह के मुख्य अतिथि के रूप में आमंत्रित विद्वान-लेखक एवं वरिष्ठ पत्रकार श्री सुशील तिवारी ने अपने उद्बोधन में कहा कि गतवर्ष मंडला के जंगलों में संयम और तप की कहानी लिखने वाले महान् संत श्री चिन्मय सागर जी के विचार जानने जब उनके पास भास्कर-सम्पादक के रूप में पहुँचा, तो उनकी दैनिक-चर्या से बहुत प्रभावित हुआ और उनके वात्सल्य में बंध गया। यद्यपि बार-बार उनसे मिलना न हो सका किन्तु आज उनके समीप पहुँच कर मैं अपना सौभाग्य मनाता हूँ। उनकी भौतिक-देह से अनेक मार्गदर्शन मिल रहे हैं, आत्मतत्व के उजास से तो सीधी, मोक्ष-मार्ग की, दिशा मिल सकेगी। उनके पूजनीय गुरु आचार्य विद्यासागर जी का आज 36 वाँ दीक्षा-दिवस-समारोह के अवसर पर मुझे भी आमंत्रित किया गया, अत: उपस्थित हो गया हूँ।

भारतभूषण जैन
अ.भा. शाकाहार क्रांति परिषद
293, सरल कॉलोनी, गढ़ाफाटक, जबलपुर

श्री अ.भा.दि. जैन विद्वत्परिषद् की कार्यकारिणी बैठक सम्पन्न

बुरहानपुर। श्री अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन विद्वत्परिषद् की कार्यकारिणी की बैठक श्री दि. जैन श्रमण संस्कृति संस्थान, सांगानेर (जयपुर), राजस्थान में दि. २५ को श्रीमान् डॉ. फूलचन्द जैन प्रेमी (वाराणसी) की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई। बैठक में वित्त वर्ष २००३-०४ के लिये नये बजट का निर्धारण एवं विगत वर्ष के आय-व्यय का विवरण प्रस्तुत किया गया है। बैठक में अनेकान्त मनीषी डॉ. रमेशचंद जैन, डॉ. शीतलचन्द जैन, डॉ. नेमिचन्द जैन, डॉ. जयकुमार जैन, डॉ. विमला जैन, डॉ. सुपार्श्वकुमार जैन, डॉ. उर्मिला जैन, पं. अरूणकुमार जैन, डॉ. अशोक कुमार जैन, प्रेमचन्द जैन, डॉ. विजयकुमार जैन, डॉ. सनतकुमार जैन, पं. कैलाशचंद मलैया, श्रीमती इन्द्रा जैन आदि विद्वानों एवं विदुषियों ने भाग लेकर समाज एवं धर्म विषयक सार्थक विचार-विमर्श में भाग लिया।

बैठक के उपरान्त विद्वत्परिषद् के विद्वानों ने श्री दि. जैन मंदिर संघीजी में विराजमान परम जिनधर्म प्रभावक, तीर्थोध्दारक, पुरातत्वीय विरासत के परम संरक्षक, मुनिपुंगव श्री सुधासागर जी महाराज, पू. क्षु. श्री गम्भीरसागर जी महाराज, पू. क्षु. श्री धैर्यसागर जी महाराज के दर्शन कर उनसे आशीर्वाद प्राप्त किया। इस अवसर पर ब्र. संजय भैया एवं ब्र. जिनेश भैया भी उपस्थित थे। विद्वत्परिषद के विद्वानों के साथ एक साक्षात्कार में मुनिपुंगव श्री सुधासागर जी महाराज ने कहा कि जिनधर्म, जिनागम एवं जिन चैत्यों के संरक्षण हेतु विद्वानों को समाज का मार्गदर्शन करना चाहिए। उन्होंने जैन मंदिरों में बन्द होती जा रही शास्त्र स्वाध्याय/वचनिका की परम्परा पर चिन्ता व्यक्त की और कहा कि जो विद्वान जिस स्थान पर रहते हैं, उन्हें वहाँ के मंदिरों में प्रतिदिन रात्रिकालीन शास्त्र स्वाध्याय की परम्परा प्रारंभ करना चहिए।

बैठक से पूर्व दिगम्बर जैन वानप्रस्थ आश्रम के उद्घाटन के अवसर पर मुनिश्री संघ के सान्निध्य में श्री अ.भा.दि. जैन विद्वत्परिषद् के मुखपत्र विद्वद-विमर्श का विमोचन श्री मदनलाल जैन ने किया।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

डॉ. अशोक कुमार जैन पुरस्कृत

जैन विश्वभारती संस्थान (मान्य वि.वि.), लाडनूं (नागौर) राज. के जैन विद्या एवं तुलनात्मक धर्म-दर्शन विभागाध्यक्ष तथा अ.भा.दि. जैन शास्त्रि परिषद् के उपाध्यक्ष, प्रख्यात जैन दर्शन मनीषी, शास्त्रीय प्रवचनकार श्रीमान् डॉ. अशोक कुमार जैन एम.ए., जैनदर्शनाचार्य, (वरिष्ठ सम्पादक-पार्श्व ज्योति) को श्री स्याद्वाद महाविद्यालय, वाराणसी की ओर से उनकी महत्त्वपूर्ण शोधकृति 'आचार्य श्री ज्ञान सागर जी महाराज का दार्शनिक अवदान' पर ५१०१/- रुपये के पुरस्कार से मुनि श्री सुधासागर जी महाराज, क्षु. श्री गम्भीर सागर जी महाराज, क्षु. श्री धैर्यसागर जी महाराज, ब्र. संजय भैया, श्री अ.भा.दि. जैन विद्वत्परिषद् कार्यकारिणी समिति के विद्वान- सदस्यों एवं महती धर्मसभा के मध्य पुरस्कृत किया गया।

डॉ. रमेशचन्द जैन की कृति का राज्यपाल द्वारा विमोचन

ललितपुर। (उ.प्र.) में परमपूज्य आचार्य श्री विराग सागर जी महाराज द्वारा प्रदत्त २१ दीक्षाओं के दीक्षामण्डप में राजस्थान के राज्यपाल महामहिम श्री निर्मल चन्द जैन ने अनेकान्त मनीषी डॉ. रमेशचन्द जैन, (पूर्व अध्यक्ष श्री अ.भा.दि. जैन विद्वत्परिषद्) बिजनौर (उ.प्र.) की प्रकाशित कृति 'जैनधर्म की मौलिक विशेषताएँ' का विमोचन किया।

विद्वत्संगोष्ठियाँ आयोजित करें

दिगम्बर जैन संतों के चातुर्मास काल में जैनधर्म दर्शन एवं साहित्य के विविध पक्षों पर संगोष्ठियाँ एवं प्रवचन, विधान, शिक्षण शिविर आदि आयोजित करने हेतु श्री अ.भा.दि. जैन विद्वत्परिषद् के मंत्री डॉ. सुरेन्द्र कुमार जैन, के पते पर सम्पर्क करें ताकि 'विद्वत्परिषद्' के विद्वानों की सहभागिता सुनिश्चित की जा सके। चातुर्मास का समय धर्मप्रभावना के लिए विशेष अवसर होता है, जिसका लाभ समाज को उठाना चाहिए।

प्रतिष्ठाचार्य प्रकोष्ठ का गठन

श्री अ.भा.दि. जैन विद्वत्परिषद् के शताधिक प्रतिष्ठाचार्य विद्वान् विधि-विधान, पंचकल्याणक प्रतिष्ठा आदि आयोजनों में अत्यधिक सक्रिय, सार्थक भूमिका का निर्वाह करते आ रहे हैं। समाज के व्यापक सम्पर्क हेतु श्री अ.भा.दि. जैन विद्वत्परिषद्-प्रतिष्ठाचार्य प्रकोष्ठ का गठन किया जा रहा है, फिलहाल इसके संयोजक श्री पं. विनोदकुमार जैन, प्रतिष्ठाचार्य, रजबांस एवं सहसंयोजक पं. पवनकुमार 'दीवान' मुरैना बनाये गये हैं। प्रकोष्ठ हेतु अपनी सेवाएँ देने के इच्छुक विद्वान अपना नाम, योग्यता, विशेष अभिरुचि का क्षेत्र, अनुभव आदि के विवरण सहित। आवेदन पत्र मंत्री कार्यालय में भिजवायें ।

जैनधर्म सम्बन्धी कृतियाँ मँगवायें

प्राच्य विद्या अहिंसा शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित जैन धर्म की मौलिक विशेषताएँ (मूल्य ६० रुपये) जलगालन विधि और उसका वैशिष्य (मूल्य १२ रुपये), श्रावक धर्म (मूल्य १२ रुपये) पासणाहचरिउ एक समीक्षात्मक अध्ययन (मूल्य ५० रुपये) तथा जैन पर्व (मूल्य ३० रुपये) आदि कृतियाँ।

सम्पर्क सूत्र
डॉ. सुरेन्द्र कुमार जैन,
सचिव पार्श्वज्योति मंच, एल-६५,
न्यू इन्दिरा नगर, ए, बुरहानपुर (म.प्र.)

पंचम आत्म-साधना शिक्षण शिविर

अत्यन्त हर्ष का विषय है कि दिनांक 30.11.2003 से 14.12.2003 तक परमपूज्य आचार्य 108 श्री विद्यासागर जी महाराज के आशीर्वाद से सिद्धक्षेत्र श्री सम्मेद शिखरजी के पादमूल में स्थित, प्राकृतिक छटा से विभूषित, परम पूज्य क्षुल्लक 105 श्री गणेश प्रसाद जी वर्णी की साधना स्थली उदासीन आश्रम, इसरी बाजार में पं. श्री मूलचन्दजी लुहाड़िया, मदनगंज (किशनगढ़) बाल ब्र. पवन भैया, कमल भैया, ब्र. पंकजजी, ब्र. चक्रेशजी, ब्र. रविन्द्रजी आदि के सान्निध्य में पंचम आत्म-साधना शिक्षण शिविर का आयोजन होने जा रहा है।

समस्त इच्छुक धर्मानुरागी भाई बहनों से अनुरोध है कि 15.11.2003 तक आश्रम में लिखित आवेदन भेजें ताकि आवास, भोजन आदि की समुचित व्यवस्थाएँ की जा सकें।

निवेदक
अधिष्ठाता - श्री ओमप्रकाश जैन (रेवाड़ीवाले)
श्री पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन शांति निकेतन उदासीन आश्रम
इसरी बाजार- (गिरिडीह) झारखंड- 825 107

जैन सन्त 108 श्री समाधि सागरजी महाराज द्वारा अनिश्चित कालीन निर्जल मौन अनशन आंदोलन

अभी तक बेमुदत मौन निर्जल अनशन आंदोलन महाराज जी ने पांच बार किए। पांचवी बार में काफी हद तक सफलता मिली। महाराष्ट्र में सदा-सदा के लिए रामनवमी को कत्लखाने, मांस ब्रिकी बंद का अध्यादेश मुंबई शासन ने निकाला। महाराष्ट्र (अपने अपने राज्य) तथा संपूर्ण भारत देश में पुनश्च गौवंश हत्या, दारूबंदी आदि की पूर्ती हेतु मुनि श्री द्वारा मौन निर्जल अनशन 31 आगस्त 2003 गणेश चतुर्थी दोपहर से करने की संभावना है। उसके समर्थनार्थ मुनिश्री ने आव्हान किया है कि 12/8/2003 रक्षा बंधन से सामूहिक मुंडन जन-जागृति तथा सरकार को जगाने हेतु करें।

ब्र. चांदमल जैन
भारतीय संस्कृती बचाओ मंच, जालना
महाराष्ट्र

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विनम्र निवेदन

देश विदेश के लोग जिस पर्यटन स्थल को पसंद करते है, वह स्वर्ण भूमि है गोवा। गोवा एक ऐसा राज्य है, जहाँ सालभर पर्यटकों का आना-जाना रहता है।

गोवा के इतिहास में जैन धर्म को बहुत बड़ा स्थान दिया गया है। कदंब राजा के कार्यकाल में जैन धर्म को स्वर्णकाल प्राप्त हुआ था, लेकिन पोर्तुगीज के आक्रमण और अत्याचार की वजह से गोवा में जैन धर्म का ह्रास हो गया।

गोवा में दिगम्बर जैन समाज ने संघटित होकर नव निर्माण दिगम्बर जैन मंडल की स्थापना की है। इस मंडल का मुख्य उद्देश्य गोवा में ऐसा दिगम्बर जैन मंदिर बनाना है, जो सभी सुविधाओं से परिपूर्ण हो। धर्मशाला, विश्रांतीगृह, समाज मंदिर, त्यागी निवास आदि सुविधाएँ उपलब्ध हों।

गोवा आने वाले जैन धर्म के यात्रियों के लिए, जैन मंदिर तथा धर्मशाला की कमी महसूस होती है। इस कमी को दूर करने की हमारी कोशिश है। परन्तु इसके लिए आपकी सहायता की जरूरत है, मंदिर सभी दिगम्बर जैन समाज का होगा। गोवा में रहनेवाले दिगम्बर जैन समाज की संख्या बहुत कम है। इसलिए यह जरूरी है कि इस धार्मिक और सामाजिक कार्य के लिये आप अपना योगदान दें।

आपकी जो भी स्वीकृति हो, या आप इस के बारे में संपर्क करना चाहते हों, तो कृपया नीचे दिये हुए पते पर संपर्क करें और स्वीकृति भेज सकते हैं।

नवनिर्माण दिगम्बर जैन मंडल, मडगांव, गोवा, ट्रस्ट द्वारा श्री भारत रामचंद दोशी, घर नं. 233, मालभाट, मडगांव पिन -403602, अथवा रत्नाकर बैंक लिमिटेड, मडगांव शाखा, बचत खाते क्र.1591 में जमा कर सकते हैं।

आपके धर्मप्रेमी
श्री भारत रामचंद दोशी, फलटण (अध्यक्ष)
श्री विजय रामगौडा पाटील, सांगली (सचिव)
श्री महावीर कल्लाप्पा जगदेव, बेडकिहाल (खजिनदार)

श्री दिगम्बर जैन समाज से एक निवेदन

परम पूज्य 108 संत शिरोमणि जैनाचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज के आशीर्वाद से ग्वारीघाट जबलपुर में नर्मदा के सुरम्य तट के समीप 50-60 वर्ष पूर्व के श्री पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन मंदिर के नवनिर्माणाधीन जीर्णोद्धार जिनालय का निर्माण कार्य विगत डेढ़ वर्ष से चल रहा है। प्रवचन हॉल, वेदी हॉल निर्माण के पश्चात् श्री जिन मंदिर ''गुम्बज शिखर'' निर्माण की बाट जोह रहा है। इस निर्माण कार्य को जबलपुर के जैन समाज को संकल्पित होकर पूर्ण करना है। आज जबलपुर में 38 जिनालय हैं. उनमें ग्वारीघाट का श्री पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन जिनालय (नवनिर्माणाधीन) भी है, जिसे भव्य स्वरूप प्रदान करना है। हम ग्वारीघाटवासी सकल दिगम्बर जैन समाज के अल्प संख्यक निवासी, जैन समाज, जबलपुर से श्री जिन मंदिर निर्माण को पूरा करने में सहयोग हेतु गुहार करते हैं। हिन्दू समाज के भव्य मंदिरों के बीच हमारा जिन मंदिर भी अपना भव्य स्वरूप लिए हमारे जैन समाज को गौरवान्वित करे, ऐसी हमारी अभिलाषा है। श्री पिसनहारी मढ़िया जी, नन्दीश्वर दीप जिनालय एवं दयोदय तीर्थ के पश्चात् श्री जिन मंदिर दर्शन ग्वारीघाट, नर्मदा तट का नौका विहार एवं स्वच्छ पर्यावरण से परिपूर्ण क्षेत्र का आनंद अवकाश के क्षणों में जैन समाज जबलपुर के लिए आकर्षण का केन्द्र होगा। हम ग्वारीघाट वासी जैन समाज के नागरिक गण ''जबलपुर जैन समाज'' जैन सामाजिक संस्थायें एवं प्रतिष्ठित दानवीर परिवारों के ट्रस्टों से विनम्र निवेदन करते हैं कि श्री पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन नवनिर्माणाधीन जिनालय के निर्माण में तन, मन, धन से भाव सहित सहयोग, दान प्रदान कर नींव से शिखर तक की यात्रा के साक्षी बनें।

सपर्क सूत्र एवं निवेदक
श्री पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन
नवनिर्माणाधीन जिनालय समिति,
ग्वारीघाट, जबलपुर

सूचना

श्री दिगम्बर सिद्धोदय सिद्धक्षेत्र नेमावर की दान रसीद बुक, रसीद नम्बर 1501 से 1550 तक की एक हैण्ड बेग के साथ दमोह से कुण्डलपुर के बीच में गुम हो गई है, जिस किसी सज्जन को मिले, कृपया नजदीक के जैन मंदिर में जमा करने की कृपा करें।

सूचित किया जाता है कि रसीद नम्बर 1505 से 1550 तक की कोरी रसीदें ट्रस्ट द्वारा केन्सिल कर दी गई हैं, उक्त रसीद को वैध नहीं माना जावेगा।

उपरोक्त रसीद नम्बर की बुक के द्वारा आपसे कोई दान प्राप्त करने आये तो उसे धोखा समझें, दान नहीं देवें।

रमेशचन्द्र काला, कोषाध्यक्ष
श्री दिगम्बर जैन रेवातट सिद्धोदय सिद्धक्षेत्र, नेमावर

बाल संस्कार शिविर का आयोजन

श्री मक्सी पार्श्वनाथ - दिगम्बर जैन पार्श्वनाथ गुरुकुल में दिनांक 26.7.03 से दिनांक 2.8.03 तक श्री कुन्दकुन्द प्रवचन प्रसारण संस्थान उज्जैन द्वारा 7 दिवसीय बाल संस्कार शिविर का आयोजन किया गया।

दिनेश जैन
अधिष्ठाता
श्री पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन गुरुकुल, मक्सी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वर्षायोग : चातुर्मास 2003

साहित्यमनीषी ज्ञानवारिधि दिगम्बर जैनाचार्य प्रवर श्री 108 ज्ञानसागर जी महाराज के द्वारा दीक्षित-शिक्षित जैन श्रमण-परम्परा के आदर्श सन्तशिरोमणि जैनाचार्य श्री विद्यासागरजी महाराज तथा उनके द्वारा दीक्षित शिष्यों का वीर निर्वाण संवत् 2529 विक्रम संवत् 2060, सन् 2003 का वर्षायोग चातुर्मास विवरण :

1 **संतशिरोमणि आचार्य 108 श्री विद्यासागरजी महाराज,** मुनिश्री समयसागरजी महाराज, मुनिश्री योगसागरजी महाराज, मुनिश्री पवित्रसागरजी महाराज, मुनिश्री विनीतसागरजी महाराज, मुनिश्री निर्णयसागरजी महाराज, मुनिश्री प्रवचनसागरजी महाराज, मुनिश्री प्रसादसागरजी महाराज, मुनिश्री अभयसागरजी महाराज, मुनिश्री अक्षयसागरजी महाराज, मुनिश्री प्रशस्तसागरजी महाराज, मुनिश्री पुराणसागरजी महाराज, मुनिश्री प्रयोगसागरजी महाराज, मुनिश्री प्रबोधसागरजी महाराज, मुनिश्री प्रणम्यसागरजी महाराज, मुनिश्री प्रभातसागरजी महाराज, मुनिश्री चन्द्रसागरजी महाराज, मुनिश्री सम्भवसागरजी महाराज, मुनिश्री अभिनन्दनसागरजी महाराज, मुनिश्री सुमतिसागरजी महाराज, मुनिश्री पद्मसागरजी महाराज, मुनिश्री चन्द्रप्रभसागरजी महाराज, मुनिश्री पुष्पदन्तसागरजी महाराज, मुनिश्री श्रेयांससागरजी महाराज, मुनिश्री पूज्यसागरजी महाराज, मुनिश्री विमलसागरजी महाराज, मुनिश्री अनन्तसागरजी महाराज, मुनिश्री धर्मसागरजी महाराज, मुनिश्री शान्तिसागरजी महाराज, मुनिश्री कुन्थुसागरजी महाराज, मुनिश्री अरहसागरजी महाराज, मुनिश्री मल्लिसागरजी महाराज, मुनिश्री सुव्रतसागरजी महाराज, मुनिश्री नमिसागरजी महाराज, मुनिश्री नेमीसागरजी महाराज,

कुल : 35 (1 आचार्यश्री, 34 मुनिराज) एवं 30 ब्रह्मचारीगण।

- ❖ आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज के द्वारा दीक्षित प्रायः सभी साधुगण बाल ब्रह्मचारी हैं। जैन श्रमण-परम्परा के ज्ञात इतिहास/जानकारी में यह प्रथम श्रमण संघ हो सकता है जिसमें वर्तमान दीक्षित 180 साधु एवं आर्यिकाएँ भी प्रायः बाल ब्रह्मचारिणी हैं।
- ❖ आचार्यश्री द्वारा ब्रह्मचर्य व्रत ग्रहण करने वाले देश के विभिन्न नगरों में लगभग 100 बाल ब्रह्मचारी भाई एवं 300 बाल ब्रह्मचारिणी बहनें भी चातुर्मास कर रही हैं।
- ❖ आचार्यश्री प्रतिदिन प्रातःकाल 'कसायपाहुड़' पुस्तक द्वितीय संघस्थ साधुओं के लिए एवं अपराह्न काल 'रत्नकरण्डक श्रावकाचार' का स्वाध्याय श्रावकों को कराते हैं।
- ❖ प्रत्येक रविवार एवं विशिष्ट पर्व के दिनों में आचार्यश्री जी का सार्वजनिक प्रवचन मध्याह्न में 3 बजे से होता है।
- ❖ कटनी बिलासपुर रेलखण्ड पर अमरकण्टक के लिए निकटवर्ती रेलवे स्टेशन पेण्ड्रारोड 45 कि.मी. है। बिलासपुर से 101 कि.मी., डिण्डोरी से 80 कि.मी., बुढार से 85 कि.मी. पर अमरकण्टक है। दक्षिण भारत से आने वालेयात्री नागपुर बिलासपुर पेण्ड्रारोड, उत्तरभारत/दिल्ली आदि की ओर से आने वाले यात्री बीना-कटनी पेण्ड्रारोड होकर अमरकण्टक पहुँच सकते हैं। भोपाल से अमरकण्टक एक्सप्रेस सायं 4 बजे छूटती है।
- ❖ अमरकण्टक नैसर्गिक सौंदर्य, प्राकृतिक मनोरम दृश्य हरीतिमा के साथ ही सुप्रसिद्ध नर्मदा, सोन एवं जुहिला नदियों की उद्गम स्थली तथा हिल स्टेशन भी है।
- ❖ **चातुर्मास स्थली :** श्री दिगम्बर जैन सर्वोदय तीर्थ, अमरकण्टक 484886 जिला शहडोल (मध्यप्रदेश) ☎:07629-269450, 269550 चेतन एस.टी.डी. 269612, 269619, 269620
- ❖ **सम्पर्क सूत्र :** (1) कार्यकारी अध्यक्ष - प्रमोद जैन, अंकुर इंटरप्राइजेज, विनोवानगर, बिलासपुर (छत्तीसगढ़) ☎: 07752-220076 (नि.) 220075 (का.) फेक्स 231422 (2) महामंत्री पी.सी. जैन 223688 (3) धर्मेश जैन, पेण्ड्रा 07751-254308 (4) वेदचन्द्र जैन पत्रकार पेण्ड्रारोड - 250680 (5) डॉ. सुनील जैन डिण्डोरी - 07644-234149 (6) मनीष जैन बुढार 07652-250110, 251120

2 **मुनिश्री नियमसागरजी महाराज :** मुनिश्री अपूर्वसागरजी महाराज, मुनिश्री पुण्यसागरजी महाराज, मुनिश्री वृषभसागरजी महाराज, मुनिश्री सुपार्श्वसागरजी महाराज

कुल : 5 मुनिराज, ब्रह्मचारीगण।

चातुर्मास स्थली : श्री नेमीनाथ दिगम्बर जैन मंदिर, मु.पो. तेरदाल-587315 तालुका-जमखंडी जिला बीजापुर (कर्नाटक)

संपर्कसूत्र : (1) बालगोंडा एम.पी. ☎:08353-3355091 (2) चन्द्रकान्त जैन, सदलगा ☎: 0831-651006

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मुनिश्री क्षमासागरजी महाराज : मुनि श्री भव्यसागर जी महाराज, (दीक्षा गुरु-ऐलाचार्य श्री नेमीसागर जी महाराज)
कुल : 2 मुनिराज, ब्रह्मचारीगण।
चातुर्मास स्थली: श्री शांतिनाथ दिगम्बर जैन मंदिर बाजार नं. 1, रेलवे स्टेशन के पास, रामगंज मण्डी, कोटा (राजस्थान) 326519 ☎: कार्या. 07459-221769
संपर्क सूत्र - (1) अध्यक्ष राजमल लोहाडिया (2) केवलचंद लुहाडिया - ☎:220171, 220571 (3) अजित जैन सेठी - 220022

मुनिश्री गुप्तिसागरजी महाराज :
कुल : 1 मुनिराज, ब्रह्मचारीगण।
चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर जैन धर्मशाला, गांधी रोड़, देहरादून - 248001 (उत्तरांचल)
सपंर्क सूत्र : (1) अध्यक्ष चन्द्रसेन जैन ☎: 0135-2654506 (2) सुरेश चंद जैन 2625823 मो. 98370 88002

मुनिश्री सुधासागरजी महाराज : क्षुल्लकश्री गम्भीरसागरजी महाराज, क्षुल्लकश्री धैर्यसागरजी महाराज।
कुल : 3 (1 मुनिराज, 2 क्षुल्लक, ब्रह्मचारीगण)
चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर जैन चन्द्रप्रभु चैत्यालय केकड़ी - 305404 जिला अजमेर (राजस्थान)
संपर्क सूत्र : (1) श्रीपाल कटारिया, सरावगी मोहल्ला ,केकड़ी ☎: 01467-220114, 220414(2) शीतल कुमार कटारिया, गणेश प्याऊ के पास, केकड़ी : 220060

मुनिश्री समतासागरजी महाराज : मुनिश्री प्रमाणसागरजी महाराज, ऐलकश्री निश्चयसागरजी महाराज।
कुल : 3 (2 मुनिराज, 1 ऐलक, ब्रह्मचारीगण)
चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र बहोरीबंद 483330 जिला कटनी (मध्यप्रदेश) ☎: 07624-261736
संपर्क सूत्र : (1) अध्यक्ष सिंघई केवलचंद जी, सिंघई पेपर मार्ट कमानिया गेट जबलपुर ☎: 0761- 2345931 (2) मंत्री - नरेन्द्र जैन, बाकल 07624-261010 (3) महावीर जैन, सिहोरा- 07624-230460 (4) सेनकुमार खितौला स्टेशन 07624-231141 (5) कमल कृषि विकास, कटनी 07622-231023

मुनिश्री स्वभावसागरजी महाराज :
कुल : 1मुनिराज, ब्रह्मचारीगण।
चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर जैन मंदिर कुरवाई - 464224 जिला विदिशा (म.प्र.)।
सम्पर्क सूत्र (1) चांदमल जैन ☎:07593-247256 (2) डॉ. चांदमल जैन कठरया (3) शिवकुमार गुडा- 247252 (4) संतोष कुमार गुडा - 244252 (5) 244250

8. **मुनिश्री समाधिसागरजी महाराज :**
कुल : 1 मुनिराज, ब्रह्मचारीगण।
चातुर्मास स्थली : श्री पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन मंदिर 308, जवाहर नगर, रोड नं. 16, गोरेगाँव पश्चिम, मुम्बई-400 062 (महाराष्ट्र) ☎: 022-28730249
सम्पर्क सूत्र : (1) अशोक भाई एस. शाह फोन : 022-28727192 (2) मयंक जैन मो. 9820382158

9. **मुनिश्री सरलसागरजी महाराज :**
कुल : 1 मुनिराज, ब्रह्मचारीगण।
चातुर्मास स्थली : श्री नाभिनंदन दिगम्बर जैन मंदिर बड़ी बजरिया, बीना-470113 जिला सागर (म.प्र.)
संपर्क सूत्र :(1)अध्यक्ष-अभय सिंघई ☎: 222459, 222759 (2) मंत्री- विभव कोठिया- 220333 (3) इंजी. सुभाष जैन - 221038, 220056

10. **मुनिश्री आर्जवसागरजी महाराज :**
कुल : 1 मुनिराज, ब्रह्मचारीगण।
चातुर्मास स्थली: श्री दिगम्बर जैन पार्श्वनाथ मंदिर, कपड़ा बाजार, कोपरगाँव-423601 जिला अहमदनगर (महाराष्ट्र)
सम्पर्क सूत्र : (1) प्रदीप गंगवाल ☎: 02423-225505 (2) नितिन कासलीवाल - 223303

11. **मुनिश्री उत्तमसागरजी महाराज :** मुनिश्री पायसागरजी महाराज, मुनिश्री सुपार्श्वसागरजी महाराज
कुल : 3 मुनिराज, ब्रह्मचारीगण।
चातुर्मास स्थली - श्री नेमीनाथ दिगम्बर जैन मंदिर मु.पो.- अब्दुल ललाट - 416 103 तालुका शिरोल जिला कोल्हापुर (महाराष्ट्र)
सम्पर्क सूत्र : (1) कल्लप्पा गिरमल ☎: 02322-254360 (2) चन्द्रकान्त जैन, सदलगा-0831-651006

12. **मुनिश्री चिन्मयसागरजी महाराज :** मुनिश्री पावनसागरजी महाराज।
कुल : 2 मुनिराज, ब्रह्मचारीगण।
चातुर्मास स्थली : पंचायती दिगम्बर जैन मंदिर शहपुरा भिटौनी - 483119 जिला जबलपुर (म.प्र.)
संपर्क सूत्र : (1) अध्यक्ष - कैलाश चंद गुमास्ता फोन ☎: 07621-230207, 230607 (2) मंत्री- राजेन्द्र कुमार जैन, संतोष कुमार जैन-230326 (3) सतेन्द्र जैन - 230264 (4) नरेन्द्र जैन- 230307 (नि.), 230543 (दु.) (5) सुशील जैन लम्हेटा- 230307

13. **मुनिश्री सुखसागरजी महाराज :**
कुल : 1 मुनिराज, ब्रह्मचारीगण।
चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर जैन मंदिर चिपरी - 416103 तालुका - शिरोल जिला कोल्हापुर (महाराष्ट्र)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संपर्क सूत्र : (1) अरविंद मजलेकर - ☎: 02322-255007 (2) 224503 (3) चन्द्रकान्त जैन सदलगा 0831-651006

14. **मुनिश्री मार्दवसागरजी महाराज :**
कुल : 1 मुनिराज, ब्रह्मचारीगण।
चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर जैन शहर मंदिर, बस स्टेण्ड के पास, देवरी कलाँ-464774 जिला सागर (म.प्र.)
सम्पर्क सूत्र : पूरनचंद बजाज- ☎: 07586-250457 (2) राजकुमार बजाज - 220136 (3) प्रकाशचंद गंजवाले - 250320 (4) सुरेश पाण्डे - 250445

15. **मुनिश्री प्रशान्तसागरजी महाराज :** मुनिश्री निर्वेगसागरजी महाराज।
कुल : 2 मुनिराज, ब्रह्मचारीगण।
चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर जैन प्राचीन मंदिर खुरई - 417117 जिला सागर (मध्यप्रदेश)
संपर्क सूत्र - (1) अध्यक्ष - जिनेन्द्र कुमार गुरहा, गुरहा भवन, खुरई ☎: 07581-240480, 241958 (नि.) 240306, 240457 दुकान (2) हेमचन्द्र बजाज 232045, 32135 (3) सुनील जैन साइकिल वाले -240912 (नि.) 240580 (दुकान)

16. **मुनिश्री प्रबुद्धसागरजी महाराज :**
कुल : 1 मुनिराज, ब्रह्मचारीगण।
चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर जैन अहिंसा भवन, मेन रोड बुढार - 484 110 जिला शहडोल (मध्यप्रदेश)
संपर्क सूत्र : अध्यक्ष -राजेन्द्र बैसाखिया ☎: 07652-260190 (2) उपाध्यक्ष-स.सिं. विमल जैन -260108 (3) मंत्री -धन्यकुमार बड़कुल (4)आशीष जैन 260773

17. **मुनिश्री अजितसागरजी महाराज :** ऐलक श्री निर्भयसागरजी महाराज।
कुल : 1 मुनिराज,1 ऐलक, ब्रह्मचारीगण।
चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर जैन धर्मशाला, शारदा विद्यापीठ के बाजू में, संजय चौक, पथरिया- 470666 जिला दमोह (मध्यप्रदेश)
संपर्क सूत्र : (1) अध्यक्ष - पदमचंद फट्टा- ☎: 242262 (2) नरेन्द्र जैन करबना वाले - 242279 (3) ऋषभ सिंघई -0760-242375 (4) ताराचंद जैन 242286

18.क **आर्यिकाश्री गुरुमतिजी :** आर्यिकाश्री उज्जवलमतिजी, आर्यिकाश्री चिन्तनमतिजी,आर्यिकाश्री सूत्रमतिजी, आर्यिकाश्री शीतलमतिजी, आर्यिकाश्री सारमतिजी, आर्यिकाश्री साकारमतिजी,आर्यिकाश्री सौम्यमतिजी आर्यिकाश्री सूक्ष्ममतिजी, आर्यिकाश्री शांतिमतिजी, आर्यिकाश्री सुशान्तमतिजी।

(ख) **आर्यिकाश्री दृढ़मतिजी :** आर्यिकाश्री पावनमति जी, आर्यिकाश्री साधनामतिजी, आर्यिकाश्री विलक्षणामतिजी, आर्यिकाश्री वैराग्यमतिजी, आर्यिकाश्री अकलंकमतिजी, आर्यिकाश्री निकलंकमति जी, आर्यिकाश्री आगममतिजी, आर्यिकाश्री स्वाध्यायमतिजी, आर्यिकाश्री प्रशममतिजी, आर्यिकाश्री मुदितमति जी, आर्यिकाश्री सहजमतिजी, आर्यिकाश्री संयममतिजी, आर्यिकाश्री सत्यार्थमतिजी, आर्यिकाश्री समुन्नतमतिजी, आर्यिकाश्री शास्त्रमतिजी, आर्यिकाश्री सिद्धमतिजी।

(ग) **आर्यिकाश्री ऋजुमति जी :** आर्यिकाश्री सरलमतिजी, आर्यिकाश्री शीलमतिजी।

(घ) **आर्यिकाश्री तपोमतिजी :** आर्यिकाश्री सिद्धान्तमतिजी आर्यिकाश्री नम्रमतिजी, आर्यिकाश्री पुराणमतिजी, आर्यिकाश्री उचितमतिजी।

(ङ) **आर्यिकाश्री अनन्तमतिजी :** आर्यिकाश्री विमलमतिजी आर्यिकाश्री निर्मलमतिजी, आर्यिकाश्री शुक्लमतिजी, आर्यिकाश्री अतुलमतिजी, आर्यिकाश्री निर्वेगमतिजी, आर्यिकाश्री सविनयमतिजी, आर्यिकाश्री समयमतिजी आर्यिकाश्री शोधमतिजी, आर्यिकाश्री शाश्वतमतिजी, आर्यिकाश्री सुशीलमतिजी, आर्यिकाश्री सुसिद्धमतिजी, आर्यिकाश्री सुधारमतिजी।

(च) **आर्यिकाश्री उपशान्तमतिजी :** आर्यिकाश्री ऊँकारमतिजी।

(छ) **आर्यिकाश्री अकम्पमतिजी :** आर्यिकाश्री अमूल्यमतिजी, आर्यिकाश्री आराध्यमतिजी, आर्यिकाश्री अचिन्त्यमतिजी, आर्यिका अलोल्यमति जी, आर्यिकाश्री अनमोलमतिजी, आर्यिका श्री आज्ञामति जी, आर्यिकाश्री अचलमतिजी, आर्यिकाश्री अवगतमतिजी।
कुल : 60 आर्यिकाएँ, 55 बाल ब्रह्मचारिणी बहनें।
चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर जैन चंद्रप्रभ जिनालय, भण्डार वसदि, जैन मठ श्रवण बेलगोला हासन (कर्नाटक) ☎: 573135
सम्पर्क सूत्र : (1) जिनदत्तराय 08176-657235, (2) 657276, 557170, 657176, 657274, 657270

19. **आर्यिकाश्री मृदुमतिजी :** आर्यिकाश्री निर्णयमतिजी, आर्यिकाश्री प्रसन्नमतिजी
कुल : 3 आर्यिकाएँ, ब्रह्मचारिणी बहनें।
चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र क्षेत्रपाल जी, सिविल लाइन्स, स्टेशन रोड, ललितपुर 284403 (उ. प्र.) ☎: 05176-276508
संपर्क सूत्र : (1) आनंदकुमार जैन सिमरावाले फोन: ☎: 05176-272587, 275261, 275262 (2) अनिल जैन प्रेसवाले - 273945 (3) अनुराग जैन अन्नू -

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

273348 (4) मनोज कुमार घीवाले - 274885

20. **आर्यिकाश्री सत्यमतिजी** : आर्यिका श्री सकलमति जी
कुल : 2 आर्यिकाएँ, ब्रह्मचारिणी बहनें।
चातुर्मास स्थली: श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र आदीश्वरगिरि, नोहटा 477204 जिला दमोह (म.प्र.)
संपर्क सूत्र : (1) डॉ. संतोष गोयल, ☎: 07606-257224, 257222 (2) भाटिया जी - 257261

21. **आर्यिकाश्री गुणमतिजी** : आर्यिकाश्री कुशलमतिजी, आर्यिकाश्री धारणामतिजी, आर्यिकाश्री उन्नतमतिजी
कुल : 4 आर्यिकाएँ, ब्रह्मचारिणी बहनें।
चातुर्मास स्थली: श्री दिगम्बर जैन मंदिर शिवनगर कॉलोनी, दमोह नाका, जबलपुर - 462002, फोन : 2640064
संपर्क सूत्र : (1) सुनील जैन मंगलाहार ☎: 0761-2645697 (नि.), 265847 0(दु.),ब्र. मणिबेन, ब्राह्मी विद्या आश्रम, मढ़ियाजी, फोन: 5018312 (3) अमित जैन पड़रिया - फोन 2341948, 2342661, मो 9425 151695

22. **आर्यिकाश्री प्रशांतमतिजी** : आर्यिकाश्री विनम्रमतिजी, आर्यिकाश्री विनयमतिजी, आर्यिकाश्री अनुगममतिजी, आर्यिकाश्री संवेगमतिजी, आर्यिकाश्री शैलमतिजी, आर्यिकाश्री विशुद्धमतिजी।
कुल : 7 आर्यिकाएँ, ब्रह्मचारिणी बहनें।
चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर जैन मंदिर बाजार मुहल्ला पनागर - 483220 जिला जबलपुर (म.प्र.)
संपर्क सूत्र : (1) अध्यक्ष - सुरेन्द्र जैन कटंगहा ☎: 0761-2350074, 2350086, 2350335 (2) मंत्री - रवि बड़कुल - 2350055 (3) फत्ती जैन हलवाई - 2350086 (4) संतोष चौधरी - 2350022, 2350005

23. **आर्यिकाश्री पूर्णमतिजी** : आर्यिकाश्री शुभ्रमतिजी, आर्यिकाश्री साधुमतिजी, आर्यिकाश्री विशदमतिजी, आर्यिकाश्री विपुलमतिजी, आर्यिकाश्री मधुरमतिजी, आर्यिकाश्री कैवल्यमतिजी, आर्यिकाश्री सतर्कमतिजी
कुल : 8 आर्यिकाएँ, ब्रह्मचारिणी बहनें।
चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर जैन धर्मशाला, मेन मार्केट, कोतवाली के पास, छत्तरपुर - 471001 (म.प्र.) ☎: 07682-248824
संपर्क सूत्र : (1) अध्यक्ष - शिखरचंद जैन- ☎: 07682-241314 (2) मंत्री - अशोक कुमार जैन (3) देवराज जैन - 244741, 241741 (4) राजेश जैन,- 248715 (5) सुनील जैन- 245926 (6) प्रदीप जैन - 241703

24. **आर्यिकाश्री आदर्शमतिजी** : आर्यिका श्री दुर्लभमतिजी, आर्यिकाश्री अन्तरमति जी, आर्यिकाश्री अनुनयमतिजी, आर्यिकाश्री अनुग्रहमतिजी, आर्यिकाश्री अक्षयमतिजी, आर्यिकाश्री अमूर्तमतिजी, आर्यिकाश्री अखण्डमतिजी, आर्यिकाश्री अनुपममतिजी, आर्यिकाश्री अनर्घमतिजी, आर्यिकाश्री अतिशयमतिजी, आर्यिकाश्री अनुभवमतिजी, आर्यिकाश्री आनन्दमतिजी, आर्यिकाश्री अधिगममतिजी, आर्यिकाश्री अमन्दमतिजी, आर्यिका श्रीअभेदमतिजी, आर्यिकाश्री उद्योतमतिजी।
कुल 17 आर्यिकाएँ, ब्रह्मचारिणी बहनें, 80 प्रतिभा मण्डल की ब्रह्मचारिणी बहनें।
चातुर्मास स्थली : श्री शान्तिनाथ दिगम्बर जैन मंदिर, सदलगा - 591 239 जिला बेलगांव (कर्नाटक) ☎: 0831-2651006
संपर्क सूत्र : सुरेन्द्र ए. प्रधाने, ☎: 0831-651678(नि.) 651730 (का.) 651730 फेक्स (2) महावीर प्रसाद अष्टगे 662244 (3) रवीन्द्र प्रधाने 651102, 651618 (4) महावीर प्रसाद जैन माचिसवाले, नई दिल्ली ☎: 011-3973893, 39935682 मो. 9810053632

25. **आर्यिका श्री प्रभावनामति जी** : आर्यिका श्री भावनामति जी, आर्यिका श्री सदयमति जी।
कुल: 3 आर्यिकाएँ, ब्रह्मचारिणी बहनें।
चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर जैन छोटा मंदिर, सिरोंज -464 228 जिला विदिशा (मध्यप्रेदश)
संपर्क सूत्र : शीलचन्द्र जैन बगरौदा वाले, किराना व्यापारी, छोटा बाजार, - फोन : 253068(दु), 253328 (नि.) (2) जितेन्द्र कुमार जैन कोठावाले, कठाली बाजार ☎: 07591-252881 (नि.), 253293 (दु.) (3) भूपेन्द्र कुमार जैन, चाँदनी चौक, जवाहर बाजार फोन: 253050 (नि.), 253850 (दु.) (4) रवीन्द्र जैन विजयराज- 252696(नि.), 253237(दु.)

25. **आर्यिकाश्री आलोकमतिजी** : आर्यिकाश्री सुनयमतिजी
कुल: 2 आर्यिकाएँ, बाल ब्रह्मचारिणी बहनें।
चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर जैन मुख्य मंदिर बाजार मुहल्ला, ढाना - 470228 जिला सागर (म.प्र.)
सम्पर्क सूत्र : (1) अध्यक्ष - डॉ. रमेश जैन फोन : ☎: 07582-285258, 285238 (2) मुकेश जैन, पत्रकार - मो. 94251 71196

27. **आर्यिकाश्री अपूर्वमतिजी** : आर्यिकाश्री अनुत्तरमतिजी
कुल : 2 आर्यिकाएँ, ब्रह्मचारिणी बहनें।
चातुर्मास स्थली : श्री चन्द्रप्रभु दिगम्बर जैन मंदिर बिलहारा राजा- 470051 जिला सागर (म.प्र.)
संपर्क सूत्र : (1) प्रकाशचन्द्र नीलेश कुमार जैन, कपड़ा व्यापारी ☎: 07584-248344 (2) शीतलचंद्र बड़कुल

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

– 248329 (3) अध्यक्ष – ऋषभ बजाज

28. **आर्यिकाश्री श्वेतमतिजी :**

कुल : 1 आर्यिका, ब्रह्मचारिणी बहनें।

चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर जैन ब्राहमी विद्या आश्रम, पिसनहारी की मढ़िया, जबलपुर – 482003 (म.प्र.)

सम्पर्क सूत्र : ब्र. मणिबेन ☎: 0761-5018312 संतोष भाई जी (नि.) 2312509 (का.) 2311384

29. **ऐलकश्री दयासागरजी महाराज :**

कुल : 1 ऐलक, ब्रह्मचारीगण।

चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर जैन त्यागी भवन, मोठे जैन मंदिर के निकट, इतवारी, नागपुर – 440002 (महाराष्ट्र) ☎: 0712-2769237

संपर्क सूत्र : (1) श्री कुमार जैन डोंनगांवकर (0712) 2770566 (2) राजेश जेजानी, 2765472

30. **ऐलकश्री नि:शंकरसागरजी महाराज :**

कुल : 1 ऐलक, ब्रह्मचारीगण।

चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर जैन मंदिर, छत्रपति नगर इन्दौर – 452011 (म.प्र.)

संपर्क सूत्र – (1) अध्यक्ष डॉ. जिनेन्द्र जैन (2) चातुर्मास समिति, देवेन्द्र जैन ☎: 0731-2530792 (3) 2410503 (4) संजय जैन मेक्स – 2537522 नि. 2539160

31. **ऐलकश्री उदारसागरजी महाराज :**

कुल : 1 ऐलक, ब्रह्मचारीगण ।

चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर जैन खण्डेलवाल मंदिर, बसंत टॉकीज के पास, अकोला 444001 (महा.)

संपर्क सूत्र : (1) सोहनलाल बिलाला – 2437254 (2) महावीर बिलाला – 2437630 (3) संदीप जैन – मो. 94221-64211

32. **ऐलकश्री सिद्धान्तसागरजी महाराज :**

कुल : 1 ऐलक, ब्रह्मचारीगण।

चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर जैन मंदिर, बडोदिया – 327604 जिला बांसवाड़ा (राजस्थान)

संपर्क सूत्र – (1) जयंतीलाल जैन ☎: 02962-261019 (2) कांतिलाल जैन 261047

33. **ऐलकश्री सम्पूर्णसागरजी महाराज :**

कुल : 1 ऐलक, ब्रह्मचारीगण ।

चातुर्मास स्थली – श्री दिगम्बर जैन मंदिर, सराय मुहल्ला, सिविल रोड, रोहतक – 124004 (हरियाणा)

संपर्क सूत्र : (1) प्रधान विजय कुमार जैन ☎: 01262-2242529 (नि) 2248098 (कार्या.) (2) मंत्री – बबली जैन (3) पिंकी जैन, उषा इलेक्ट्रिकल्स, सिविल रोड, रोहतक – 2243408 (हरियाणा)

34. **ऐलकश्री नग्रसागरजी महाराज :**

कुल : 1 ऐलक, ब्रह्मचारीगण ।

चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर जैन पार्श्वनाथ मंदिर, बड़ी बामौर-473990 तह. खनियाधाना जिला शिवपुरी (म.प्र.)

संपर्क सूत्र : (1) अध्यक्ष – सुदेश कुमार जैन ☎: 07497- 254144 (2) विनोदकुमार जैन बिसनपुरा वाले फोन: 254169

35. **क्षुल्लकश्री ध्यानसागरजी महाराज :**

कुल : 1 आर्यिका, ब्रह्मचारीगण।

चातुर्मास स्थली – श्री दिगम्बर जैन बाहुबली व्यायाम शाला भगवान् महावीर अहिंसा ट्रस्ट सेक्टर- 25, निगड़ी,पूना 411 044 ☎: 020- 7656451

संपर्क सूत्र – (1) शांतिनाथ एम. मदुन्नावद आर.एच. 95/3, शाहूनगर, चिंचवड, पूना-9 महाराष्ट्र ☎: 020-7493244 (2) एस.एन. पतजल – 7655428 (3) अध्यक्ष – अजित पाटिल – 7656451

36. **क्षुल्लकश्री नयसागरजी महाराज**

कुल : 1 क्षुल्लक, ब्रह्मचारीगण।

चातुर्मास स्थली : श्री पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन मंदिर, गोतगंज, छिंदवाड़ा (म.प्र.) 480 001

संपर्क सूत्र : (1) सुनील गोयल ☎: 07162-242268 (2) अशोक बाकलीवाल 241726 (नि.) मो. 98270-61926

37. **क्षुल्लकश्री पूर्णसागरजी महाराज :**

कुल : 1 क्षुल्लक, ब्रह्मचारीगण।

चातुर्मास स्थली : श्री दिगम्बर जैन मंदिर लकलका तह.- तेंदुखेड़ा जिला दमोह (मध्यप्रदेश)

संपर्क सूत्र : (1) अध्यक्ष - कडोरीलाल ☎: 07603-204247, (2)शीलचंद 204255 (3) सुमेरचंद सिंघई तेंदूखेड़ा 07603-263816 (नि.) 263723 (दुकान)

वर्तमान में आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज से दीक्षित 58 मुनि महाराज, 109 आर्यिकाएँ , 8 ऐलक महाराज तथा 5 क्षुल्लक महाराज जी। कुल = 180

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जापान में प्रचलित येन मत और जैनधर्म

पं. जगन्मोहन लाल शास्त्री कटनी

'दिनमान' के 1.10.77 के अंक में 'धर्म-दर्शन' खंड में प्रकाशित 'आत्मानुकूल पथ' नामक शीर्षक में बताया गया है कि जीन कारपेंतियरने अपने एक भाषण में येन मतको बौद्ध धर्मकी एक शाखा बताया है। परंतु, यह कुछ बातों में बौद्ध धर्म से बिलकुल भिन्न है।

येन मत पूर्णत: आत्मानुभूति पर आधारित है। इसमें गुरु के उपदेश तथा प्रवचन को कोई स्थान नहीं है। इसे सभी अपना सकते हैं। यह एक प्रकार का स्व-अनुशासन है। इस मत में सभी धर्मों के मिश्रण की अभूतपूर्व संभावनायें हैं। योग-विज्ञान तथा अनुशासनका इतना सुन्दर समन्वय अन्यत्र देखने को नहीं मिलता। यह मत इतना व्यापक है कि रूढ़िवादी अर्थों में बौद्ध धर्म की श्रेणी में नहीं आता। यह मुख्यत: ध्यान मूलक धर्म है। इसमें ध्यान के केन्द्रीयकरण को एक निश्चित बिन्दु तक पहुचाने की आवश्यकता है। यह मनोविज्ञान से जुड़ा हुआ है और रहस्यमय है। यह धर्म और समाज में सन्तुलन लाता है। यह मत उपनिषद् धर्म के अधिक समीप लगता है।

डॉ. कारपेंतियरने अनेक प्राचीन धर्म ग्रन्थों के आधार पर यह भी प्रमाणित किया है कि बौद्ध धर्म पर ही येनमतकी छाप पड़ी है। उदाहरणार्थ, योग में चित्तवृत्ति निरोध, आत्मानुभूति, समय और धार्मिक क्रियायें येनमत की ही विशेषतायें हैं, बौद्ध धर्मकी नहीं।

मुझे पन्द्रह वर्ष पूर्व येनमत के विषय में जानकारी प्राप्त हुई थी। मैंने अनेक विदेशागन्ताओं से इसके विषय में विशेष जानकारी चाही थी, पर उनका विश्वास था कि जापान में तो बौद्ध धर्म ही है, येन जैसा कोई पृथक धर्म नहीं है। अपने शोधकों के प्रसाद से मैं इस विषय पर विस्तृत विचार नहीं कर पाया। लेकिन डॉ. कारपेंतियर के विवरण से इस विषय में जो तथ्य सामने आते हैं। वे मेरी दृष्टि से निम्न है:

येनमत जैनधर्म की शाखा सम्भावित है क्योंकि इसमें वर्णित स्वानुभूति ही सम्यग्दर्शन है और स्व अनुशासन ही निश्चय चारित्र है। इन दोनों का संबंध आत्माश्रयी है, वाह्यस्रोती नहीं। इसमें अनेक धर्मों के मिश्रण की संभावनायें इसके अनेकान्तवादी दृष्टिकोण को व्यक्त करती हैं। इसका ध्यान जैनधर्म में मोक्ष या निर्वाण या आत्मानुभूतिका साधन बताया गया है। जैनधर्म भी आत्मा को शुद्ध, बुद्ध मानता है और निर्वाण को ईश्वर कृपा पर निर्भर नहीं मानता। येनके समान ही जैनधर्म भी दरबारी धर्म नहीं रहा। यह बौद्धधर्म से पूर्ववर्ती भगवान् पार्श्वनाथ के समय में भी प्रचलित था। इसमें वीतरागता और आत्मानुभूतिको उच्च स्थान प्राप्त है। जैनधर्म में समय पर भी बल दिया गया है।

इस प्रकार येन और जैनधर्म में न केवल नाम साम्य है, अपितु उसके सिद्धान्त भी समान हैं। क्या ऐसा माना जा सकता है कि सहस्रों वर्ष पूर्व जब बौद्ध चिन्तक एशियाई देशों में धर्म प्रचार हेतु गये थे, तब जैन चिन्तक भी गये हों? उस समय जहाँ जैनधर्म का अधिक प्रभाव पड़ा हो, वे आज भी येन कहलाते हों? यह विचार मात्र भावनात्मक नहीं हो सकता, इस विषय में शोधकों को विचार करना चाहिये।

जैनधर्मानुयायी वाणिज्यिक रहे हैं और आज भी उनका इसी ओर झुकाव है। इसलिये उनसे इस प्रकार की खोज की क्या आशा की जावे? इनकी अनेक संस्थाओं को तो अपने देश में ही अपने धर्म और समाज पर वात्सल्य नहीं है, फिर विदेशों की तो बात ही क्या? क्या सराक जाति संबंधी शोध से हमारी समाज या संस्थायें प्रभावित हुई हैं? संस्कृतज्ञ विद्वानों को भी पारस्परिक शास्त्रार्थ में ही विश्वास है। मैं इस लेख द्वारा समाज के प्रबुद्ध वर्ग तथा धार्मिक वर्ग का ध्यान इस प्रकार की शोधों की ओर आकर्षित करना चाहता हूँ। उन्हें आज की आवश्यकता को समझने तथा अनुदार वृत्ति को छोड़ने का आग्रह करना चाहता हूँ। इसके बिना धर्म की उन्नति, प्रभावना, प्रचार-प्रसार व कालान्तर स्थायित्व कुछ भी नहीं हो सकता।

मेरे ध्यान में हमारे प्रमाद के अनेक उदाहरण हैं। एक बार एक प्रभावी राजनीतिक नेता ने भूतपूर्व सिन्ध प्रान्त में जैनधर्म और उसके तीर्थंकरों के विषय में एक लेख लिखा था। वह बड़ा ही रोचक एवं ऐतिहासिक विषय था। लेकिन उसपर भी हमारा ध्यान नहीं गया। यही नहीं, कभी-कभी तो हम शोधकों को हतोत्साह भी करते हैं। एक बार इलाहाबाद के सुप्रसिद्ध अजैन विद्वान ने हुकुमचन्द्र अभिनन्दन ग्रन्थ के लिए एक जैन इतिहास से सम्बन्धित गवेषणापूर्ण लेख भेजा था। वह लेख प्रकाशित तो नहीं ही किया गया, उसे लौटाया भी नहीं गया। इसीलिए एक बार जब मैंने उन्हें महावीर जयन्ती पर कटनी आमन्त्रित किया, तो उन्होंने नकारात्मक उत्तर देते हुए लिखा, "मुझे जैनों से जुगुप्सा हो गई है।"

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रजि.नं. UP/HIN/29933/24/1/2001-TC डाक पंजीयन क्र.-म.प्र./भोपाल /588/2003

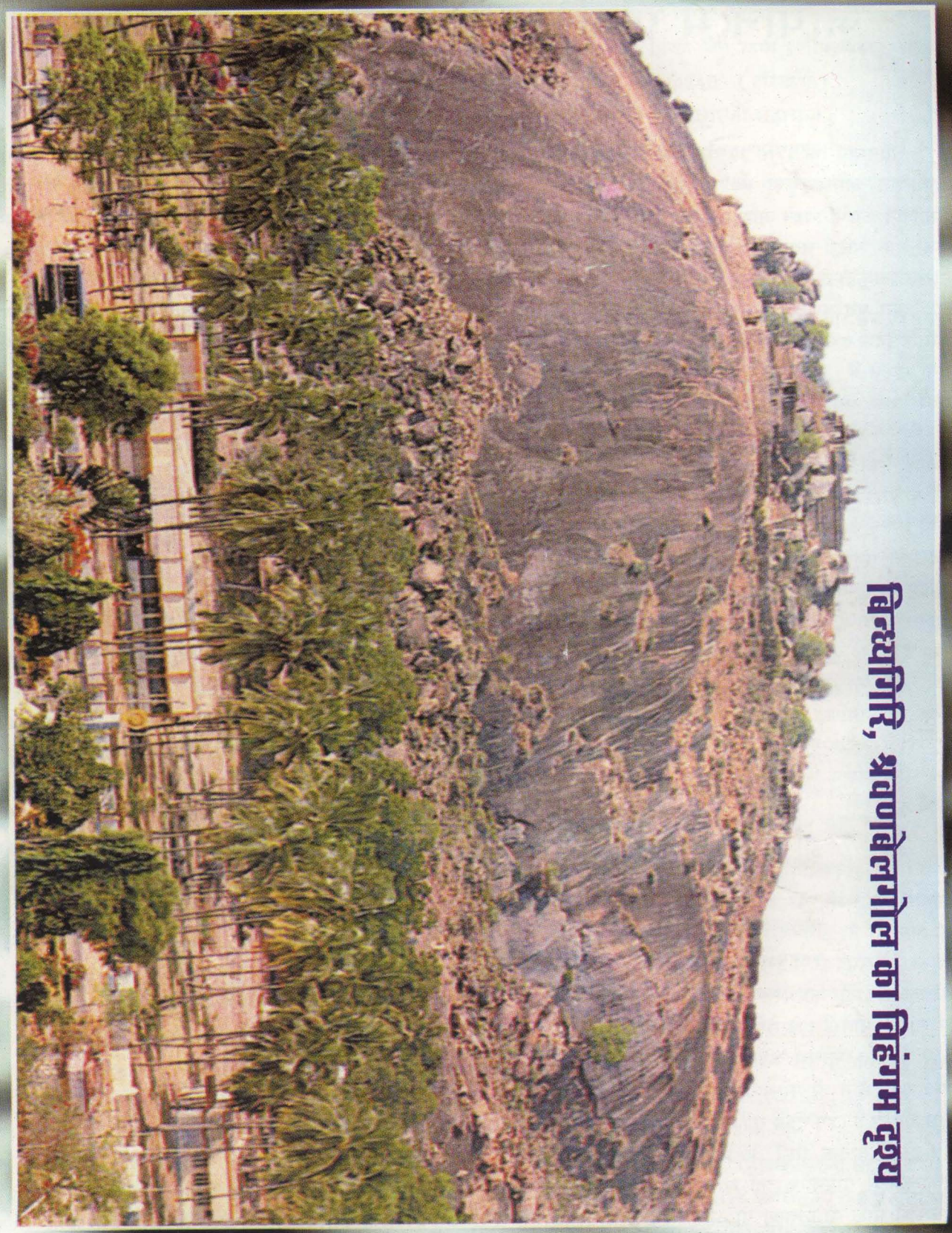

विन्ध्यगिरि, श्रवणबेलगोला का विहंगम दृश्य

स्वामी, प्रकाशक एवं मुद्रक : रतनलाल बैनाड़ा द्वारा एकलव्य ऑफसेट सहकारी मुद्रणालय संस्था मर्यादित, जोन-I, महाराणा प्रताप नगर, भोपाल (म.प्र.) से मुद्रित एवं सर्वोदय जैन विद्यापीठ 1/205, प्रोफेसर्स कालोनी, आगरा-282002 (उ.प्र.) से प्रकाशित।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org